विषय-सूची

अवतरणिका	१
जन्म और शैशवकाल	८
बचपन	१२
यौवन ...	१७
धर्मजीवन का विकास	२९
ब्राह्मसमाज के साथ योगदान	३२
धर्मप्रचार	४४
भारतवर्षीय ब्राह्मसमाज की स्थापना ...	५७
ब्राह्मधर्म का प्रचार	६९
इंगलैंड-यात्रा	८८
कूचबिहार में विवाह-सम्बन्ध	१०८
नवविधान	१२९
रोग और शेष जीवन	१४५

भूमिका

ब्रह्मानन्द केशवचन्द्र सेन की जन्म-तिथि १८३८ ई० की १९ वीं नवम्बर है। आगामी वर्ष १९३८ ई० में आपकी शत वार्षिक जन्म-तिथि के उत्सव का आयोजन हो रहा है। आपका जीवन चरित्र बङ्गला और अङ्गरेजी में कई महानुभावों ने लिखकर जगत् का उपकार किया है। हिन्दी भाषा में आपकी जीवनी अभी तक प्रकाशित नहीं हुई है। १९३४ ई० की ८ वीं जनवरी को आपके स्वर्गारोहण की पचासवीं तिथि के उत्सव के अवसर पर मैंने एक बहुत संक्षिप्त जीवन-विवरण बाँकीपुर ब्राह्मसमाज की ओर से प्रकाशित किया था। फिर शत वार्षिक जन्म-तिथि के अवसर पर मेरा लिखा आपका संक्षिप्त जीवन-चरित पण्डित रामदहिनमिश्र बाल-शिक्षा मासिक ग्रन्थमाला के सम्पादक ने इस वर्ष प्रकाशित किया है। वह पुस्तिका इस पुस्तक का सारांश स्वरूप है। आपकी जन्म-तिथि के गत शत वार्षिक उत्सव के अवसर पर मैंने आपके प्रति श्रद्धा और भक्ति स्वरूप आपकी चरित-कथा हिन्दी में लिखकर इसे हिन्दी भाषा-भाषी सर्व साधारण के निकट उपस्थित करने की चेष्टा की है।

आपका जीवन अति महान् है। यदि आपके चरित्र के सभी विवरण लिखे जायँ तो एक बहुत बड़ा ग्रन्थ बन जाय, अतएव मैंने आपके चरित्र की विशेष-विशेष बातों को लिखने की चेष्टा की है। पुस्तक का आकार बहुत बड़ा न हो कि जिसमें पाठकों को धैर्य्य न रहे इस कारण मुझे इन विशेष बातों का भी पूरा विवरण करने का साहस नहीं रहा। इसमें सन्देह नहीं है कि ऐसा करने से मैंने पाठकों को केशवचन्द्र के जीवन की बहुत-सी शिक्षाप्रद और बहुमूल्य बातों से वञ्चित रक्खा है। पर, पुस्तक का आकार बढ़ने से शायद पाठक उसे धैर्यपूर्वक न पढ़ सकें, इस कारण मैंने इसे बहुत बड़ा नहीं किया है।

ब्रह्मानन्द केशवचन्द्र सेन की अलौकिक जीवन-कथ
हमलोग एक-से-एक अमूल्य रत्न पाते हैं जिनसे
सुन्दर और सुखकर रूप धारण करता है। इन सब र
केशव के समन्वय का भाव अति विचित्र है। सामञ्जस्य
मिलन ही केशवचन्द्र का जीवन है। आप ही ने
में पहले-पहल सब धर्मों में एकता और प्रेम का प्रचार
हिंसा, द्वेष, आदि को मानव-समाज से दूर करने की
चेष्टा की थी। इसी कारण आप इतने महान् और पवित्र बने

आप सांसारिक जीवनयापन करते हुए भी
परमेश्वर का अनुभव अपने अन्तःकरण में करते थे, और
आदेशों को सुनते थे। उन्हीं आदेशों के ऊपर आपने
जीवन को सङ्गठित किया था। आप संसार में रहक
वैरागी थे, पर आप एक प्रसन्न वैरागी थे।
सच्चिदानन्द के साथ रहकर आप सर्वदा प्रसन्न रहते थे।
एक ओर संसार खींचता था, जिसके आकर्षण के कारण
मानवसमाज की यथार्थ भलाई और मङ्गल के लिये
यत्न करते रहे। दूसरी ओर इस सासारिक आकर्षण से
ज्यादा आनन्दमय परमात्मा का आकर्षण था। इसी
आपका सांसारिक जीवन आध्यात्मिक भावों से परिपूर्ण
आपके अन्तर का चमत्कार-पूर्ण भाव आपके मुख मण्ड
निरन्तर प्रकाशित होता रहता था, क्योंकि Face is the in
of heart—मुख हृदय का सूचक है। आपके इन महान्
से अनुप्राणित हो मैंने आपकी जन्म-तिथि के शत वार्षिक
के अवसर पर आपके महान् चरित्र का संक्षिप्त विवरण
करने का साहस किया है।

श्रीबेचूनारायण
(रायबहादुर)

२९—५-१९३७

ब्रह्मानन्द केशवचन्द्र सेन

ब्रह्मानन्द केशवचन्द्र सेन

अवतरणिका

केशवचन्द्र सेन का जीवन अति अपूर्व और अलौकिक है। जिस समय आपका जन्म हुआ था, जिस समय आपके द्वारा सब कार्य किये गये थे उस समय के समाज और देश की अवस्था का अवलोकन करने से आपके चरित्र की विशेषता और महत्ता झलकती है। राजा राममोहनराय के समय में भारतवर्ष में अँगरेजी शिक्षा का विस्तार आरम्भ हुआ था। इस आरम्भ के फल-स्वरूप केशवचन्द्र सेन का समय था। अँगरेजी शिक्षा और सभ्यता का आलोक चारों ओर फैलाकर उस समय के लोगों को अन्धकार में छिपे हुए मैल और जंजालों को दिखाकर लोगों को देश की मलिनता दूर करने की स्फूर्ति और उद्योग से परिपूर्ण कर रहा था। कहाँ पर देश और समाज की दुर्दशा है, किस प्रकार इसे दूर कर मनुष्य प्रसन्न सुख-शान्ति के साथ अपना जीवन व्यतीत करेंगे, यही भाव सभी उदारचित्त और ज्ञानी पुरुषों के जीवन को आकर्षित कर रहा था। किस्तान-

समाज के उत्साही प्रचारक दल, मङ्गलाकांक्षी राज-कर्मचारी वृन्द और वैज्ञानिक पण्डित दल इस भाव को देखकर आनन्द, उत्साह और उद्यम से भर गये थे। इसी समय केशवचन्द्र सेन का आविर्भाव हुआ था। यद्यपि इस समय देश और समाज के सुधार की चिन्ता सभी देशभक्तों के हृदय में उमड़ रही थी, तोभी सब की दृष्टि केवल अँगरेजी शिक्षा और सभ्यता की ओर थी। सभी युवकों के मन में यह विश्वास था कि अँगरेजी भाषा के कतिपय वाक्यों और अलङ्कारों को जानने ही से जीवन का काम चलेगा, अतएव सब की दृष्टि केवल अँगरेजी भाषा पर किञ्चित् मात्र ज्ञान लाभ की आशा से पड़ी थी। जो कोई विज्ञता के साथ अँगरेजी बोल सकते थे वे ही सभ्य और मान्य समझे जाते थे। अतएव बहुतों के मन में अँगरेजी भाषा सीखने और बोलने की इच्छा प्रबल होती गई। इसी ओर प्रायः अधिकांश लोगों की अभिरुचि और आकांक्षा थी। साधारण सामाजिक और आध्यात्मिक उन्नति और विकाश की ओर दृष्टि बहुत कम लोगों की थी। किस प्रकार अँगरेजी भाषा सीखकर अँगरेजी में बात चीत करके देश के लोगों को चकित करेंगे और दफ्तरों में नौकरी करेंगे, इसी प्रकार की अभिलाषा का बोलबाला हो गया था।

अनेक तर्क-वितर्क के बाद १८३५ ई० में यह स्थिर हुआ कि भारतवर्ष में अँगरेजी शिक्षा का विस्तार हो। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि इस प्रकार के विचार से भारतवर्ष का अतिशय मङ्गल हुआ है। इसी अँगरेजी शिक्षा और विज्ञान-चर्चा के कारण आज चारों ओर भारतवर्ष में इस प्रकार उन्नति फैली हुई है। यदि इस प्रकार को प्रधानता अँगरेजी शिक्षा को

नहीं दी जाती तो आज इस के कारण जो भारतवर्ष में आलोक फैला हुआ है और जो आलोक-रश्मि सभी भारतवासियों को एकीभूत कर रही है उसकी आभा से हमलोग वञ्चित रहते; पर इसके साथ-साथ मातृभाषा, संस्कृत, पारसी और अरबी की ओर से लोगों की उदासीनता बढ़ती गई। युवक वृन्द अति उत्साह के साथ अँगरेजी शिक्षा का समर्थन करने लगे और देश की जातीय प्रथाओं और अनुष्ठानों को अनादर की दृष्टि से देखने लगे। अनेकों ने हिन्दू धर्म की ओर अश्रद्धा और अभक्ति दिखाई और वृद्धों के आचार-व्यवहार पर बड़े उत्साह के साथ सभा मण्डपों में आक्रमण करने लगे। खान-पान तथा रहन-सहन में हिन्दू समाज के नियमों और बन्धनों को अपनी अभिरुचि के अनुसार उठा देने के लिये बहुत-से युवक तत्पर हुए। जाति-प्रथा के विरोध में बहुत-से लोग खड्गहस्त हुए। इसी समय कई उत्साही युवकों ने क्रिस्तान-मण्डली अथवा ब्राह्मसमाज की शरण ली। ये सब होते हुए भी कुछ सच्चे धर्माभिलाषी सज्जनों को छोड़कर बहुतों का मन और उद्योग बाहरी आडम्बर—पार्थिव सुख-भोग की ओर ही था। सत्य, प्रेम और भक्ति के प्रति अभिरुचि और आकांक्षा प्रायः लुप्त ही हो रही थी। शास्त्रों का अध्ययन कर उनमें छिपे हुए सत्य का अन्वेषण करना प्रायः स्वप्न-स्वरूप ही था। वेद, उपनिषद्, महाभारत, रामायण, भागवत, गीता इत्यादि शास्त्रों की चर्चा कुछ सत्याभिलाषी पुरुषों को छोड़कर किसी के लिये रुचिकर न थी और न तो इनके अध्ययन के लिये उचित प्रबन्ध ही था। प्रायः सभी की दृष्टि पाश्चात्य भाषा और सभ्यता ही की ओर थी। खेद की बात

है कि वर्तमान काल में भी इन धर्मशास्त्रों का उचित सेवन नहीं किया जा रहा है जिसके कारण आज भी भारतवासी अज्ञानता और मोहमाया की निद्रा से वशीभूत हो अचेतन हो रहे हैं। जिस प्रकार आजकल धर्मचर्चा, यथार्थ धार्मिक जीवन के प्रति उदासीनता का परिचय देकर सिनेमा, चाय, पान आदि बाहरी आडम्बरों की ओर लोगों की अभिरुचि दिन-दिन बढ़ रही है, इसी प्रकार उस समय में भी अधिकांश लोग सुरापान, नाच-गान इत्यादि व्यसनों में लीन रहते थे। जिस प्रकार आज विना श्रद्धा के साथ प्रतिमा-पूजन और अनेक प्रकारों की कुप्रथाओं तथा अनुष्ठानों के प्रति लोग आसक्त हैं इसी प्रकार उस समय में भी लोग विना विश्वास और भक्ति के साथ प्रतिमा पूजन-और नाना प्रकार के अनुष्ठानों के अधीन थे। जिस प्रकार आज भी दुर्गा-पूजा, सरस्वती-पूजा के अवसर पर लोग यथार्थ पूजा का भाव त्याग कर बाहरी चमक-दमक थियेटर, यात्रा, अभिनय, सिनेमा में लीन रहते और पूजा का भार एक पुरोहित के हाथ समर्पण करते हैं, इसी प्रकार उस समय भी लोगों ने अपने को एक पुजारी के हाथ सौंप रक्खा था और अन्ध रूप से उनकी आज्ञा को पालन किया करते थे। यथार्थ भगवत् चिन्ता, भक्ति, विश्वास और सत्य की आकांक्षा विरले ही के उर-अन्तर में जाग्रत थी। देश की ऐसी अवस्था देखकर कई यथार्थ देशहितैषी व्यक्तियों ने नवयुवकों को सत्य मार्ग की ओर ले चलने की व्यवस्थाएँ और युक्तियाँ कीं। विशेष कर कलकत्ते में, हमलोग जानते हैं कि, किस प्रकार राजा राममोहनराय और उनके मित्रगण, राजा राधाकान्तदेव, केशवचन्द्र सेन के पितामह

दीवान रामकमल सेन, महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर इत्यादि महापुरुषों ने देश की दुर्दशा और दुर्नीति देखकर व्यथित हो देश में मङ्गल और कल्याण फैलाने की चेष्टा की थी। इस प्रकार की चेष्टा में उनलोगों को सरकार तथा क्रिश्चियन समाज के प्रचारकों से पूरी सहायता मिली थी। लाट साहब, मेकौले, (Lord Macaulay), डाक्टर अलेक्जराडर डफ (Dr. Alexandar Duff), डेविड हेयर (David Hare) सभी महापुरुषों की दृष्टि इस ओर गई थी। क्रिश्चियन प्रचारकों ने स्कूल, कौलेज और नाना प्रकार के सङ्गठन और मराडली को स्थापित किया। भारत की भिन्न-भिन्न भाषाओं में बाइबिल के अनुवाद कर लोगों को नीति और धर्म की ओर आकर्षित करने की यथाशक्ति चेष्टा और युक्ति की थी। परन्तु इसके साथ-साथ हिन्दू-धर्म के प्रति, हिन्दू आचार, व्यवहार, नियम, पद्धति इत्यादि के प्रति विरोध भाव तथा सहानुभूति के अभाव के कारण इनका प्रभाव लोगों की नीति और चरित्र के ऊपर उतना फलदायक नहीं हुआ। यथार्थ चरित्रगठन और नीतिपरायणता की ओर उतनी दृष्टि लोगों की न थी। उच्च तथा शिक्षित और फिर निम्न तथा अशिक्षित समाज के लोग इनसे प्राय अलग ही रहे। इनके प्रचार का प्रभाव इनलोगों के ऊपर उतना नहीं पड़ा और न तो उन युवकों को सत्पथ पर ला सका जिन्होंने स्वेच्छाचारी हो हिन्दू-धर्म से वर्जित खान-पान को ही जीवन का लक्ष्य समझ रक्खा था।

इस समय महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर ब्राह्म धर्म के एकेश्वर-वाद मत का प्रचार कर रहे थे। वे हिन्दू-धर्म के शास्त्रों की

ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करने लगे। उस समय हिन्दू-धर्म के शास्त्रों और पुराणों की ओर लोगों की अभिरुचि और आग्रह वैसा नहीं था जैसा अँगरेजी ग्रन्थों की ओर था। महर्षि अपने गूढ़ अध्ययन और चरित्र से लोगों को ब्राह्म-समाज की ओर आकर्षित करने के लिये प्राणपण से चेष्टा और यत्न कर रहे थे। यद्यपि नाना प्रकार के मतभेद और विरोध भाव थे और हिन्दू समाज के कट्टर नेताओं की चेष्टा बराबर ब्राह्मसमाज को तोड़ देने के लिये रही, महर्षि ने अपने धर्म जीवन के प्रभाव से कतिपय वीर उत्साही पुरुषों को इस क्षुद्र समाज की ओर आकर्षित किया जिसकी बदौलत इस छोटे समाज ने बाधा-विघ्नों का अतिक्रम कर वीरता और प्रवीणता के साथ अपना काम किया और कर रहा है।

इन धर्माकांक्षी महापुरुषों में केशवचन्द्र सेन एक थे जिन्होंने अपने धार्मिक जीवन के प्रभाव से उस समय के मानव-समाज में धर्म की धारा प्रवाहित कर मानव-जीवन में धर्म की भित्ति स्थापित की और मनुष्य के सभी कार्यों में प्राचीन आर्यकालीन ऋषिमुनियों की नाईं परब्रह्म की प्रधानता और आवश्यकता दिखलाई। जिस समय आपका आविर्भाव हुआ था उस समय सभी विषयों में लोग पार्थिव सुख-लालसा के वशीभूत हो यथार्थ धार्मिक जीवन-यापन में उदासीन और निरुत्साह हो रहे थे। ऐसी दशा देख केशव के मन में चारों ओर ब्रह्म-ज्योति की रश्मि फैलाने की स्पृहा और लालसा अति बलवती हुई। आपने सङ्कल्प किया कि आप प्रत्येक संस्था, प्रत्येक कार्य, प्रत्येक नर-नारी की सेवा में अपने जीवन को उत्सर्ग करेंगे। बस, प्रचण्ड

अग्नि-स्वरूप उत्साह के साथ आपने इस महान् कर्मक्षेत्र में अपने को लगाया और चारों ओर आपकी उत्साह-अग्नि धधक उठी। जन-समाज से एक दूसरे के प्रति विद्वेष, वाद-विवाद, घृणा इत्यादि कलङ्क के भावों को दूर कर मानव-मण्डली में एकेश्वरवाद की घोषणा, एकत्व, प्रेम, सद्भाव और शान्ति स्थापित करना आपके कार्यसाधन का प्रधान अङ्ग था। इसी की सफलता और पूर्ति के लिये आपने तन-मन से यथासाध्य चेष्टा और उद्योग किया।

जन्म और शैशवकाल

कलकत्ते में एक शिक्षित, सम्भ्रान्त और धनवान् हिन्दू परिवार में १८३८ ई० की १९ वीं नवम्बर को प्रातःकाल केशव-चन्द्र सेन का जन्म हुआ था। आपके पिता का नाम प्यारीमोहन सेन और पितामह का नाम रामकमल सेन था। यह सेन-परिवार धन, ऐश्वर्य और ख्याति के लिये बहुत प्रसिद्ध था। केशव के पूर्व पुरुषों का वास-स्थान जाह्नवी नदी के किनारे हुगली में "गौरिभा" ग्राम में था। वहाँ से कार्यवश वे लोग कलकत्ते में आये और यहाँ बस गये। अपने सत् स्वभाव, धर्मनिष्ठा, सत्यनिष्ठा, उत्साह और परिश्रम की बदौलत दिन-दिन उनलोगों की उन्नति होती गई। इस वैद्य सेन-परिवार के लोग इस प्रकार क्रमश उन्नत और समृद्धिशाली हो कलकत्ते में सबों के स्नेह, भक्ति और श्रद्धा के पात्र हुए। आपलोगों ने कलकत्ते के कोलुटोला स्थान में अपना घर निर्माण किया। इसी स्थान में केशवचन्द्र का जन्म हुआ था।

केशव की प्रकृति जिस प्रकार स्वर्ग की वार्ता से भरी हुई थी, उसी प्रकार आपके शरीर में भी स्वर्ग की सुन्दरता झलकती थी। 'गौरवर्ण, शान्त, शिष्ट, प्रियदर्शन बालक केशव को देखने से दिव्य कान्तिमय एक स्वर्गदूत' का आभास लोगों को मिलता था। बचपन ही से आपकी प्रकृति धीर और गम्भीर थी और आप मितभाषी और स्वातन्त्र्यप्रिय थे। आप सर्वदा परिष्कार और परिच्छन्न रहा करते थे। अपनी सारी चीजों को सर्वदा ठीक-ठीक जगहों में सजाकर रक्खा करते थे। सभी चीजों में परिच्छन्नता और सुन्दरता झलकती थी। अन्तर और बाहर दोनों से सदा ही मानों आप सरलता, परिच्छन्नता और सुन्दरता का परिचय देते थे। आपकी बुद्धि भी प्रारंभ ही से अति तीक्ष्ण और प्रखर थी, चरित्र निर्मल और सरल था। 'होनहार बिरवान के होत चिकने पात'। इन्हीं सब स्वाभाविक गुणों के कारण आपने इस प्रकार जन-समाज में ब्रह्मजीवन लाभ की कामना और आकांक्षा की नींव डाली है।

आप जिस परिवार में लालित-पालित हुए थे वह परिवार भी आपकी प्रकृति को सदा शुद्ध और सरल रखने मे परम सहायक हुआ था। कोलुटोले के सेन-परिवार की ख्याति देश-विदेश चारों ओर फैली थी। रामकमल सेन वैष्णव धर्मावलम्बी पुरुप थे। वे विज्ञ, विचक्षण, बुद्धिमान्, सत्यनिष्ठ, न्यायपरायण, साहसी और परिश्रमी व्यक्ति थे। विष्णु-भक्ति ही इनका आधार और सहारा थी। इस पवित्र धर्मनिष्ठ परिवार में सर्वदा ही देव-आराधना और धर्म का एक-न-एक अनुष्ठान होता ही रहता था। प्रात काल और सन्ध्या समय मधुर हरिनाम की

ध्वनि से गृह और आस-पास की जगह मुखरित रहती थी; और चारों ओर से लोग आ-आकर इस धार्मिक वायु-मंडल के नीचे अपने को पवित्र और शुद्ध किया करते थे। इस महत् परिवार का धर्म केवल शास्त्र पाठ, स्तोत्र-पाठ, वार्त्तालाप और वागाडम्बर का धर्म नहीं था। धर्म ने परिवार के प्रत्येक अंश का यथार्थ रूप से स्पर्श किया था और इसी कारण इस परिवार का धर्म ज्वलन्त रूप से जीवन के प्रत्येक कार्य में प्रत्यक्ष भाव से प्रकाशित था। दान-ध्यान, क्रिया-कलाप, अतिथि-सत्कार, दरिद्र-सेवा इत्यादि सत्कार्यों में यह परिवार सदा अग्रसर था।

इस प्रकार धर्मनिष्ठ परिवार में केशवचन्द्र सेन का आविर्भाव हुआ था। पिता माता और परिवार के और-और लोगों के उज्ज्वल सत् दृष्टान्त के भीतर पालित हो केशव शैशवकाल ही से सद्गुण और धर्म की ओर आकृष्ट हुए थे। कहीं भी क्यों न हो, ज्योंही आपने जाना कि कोई सत्कार्य हो रहा है आपकी दृष्टि उस ओर पड़ी और आप उसे बड़ी धीरता और उत्साह के साथ अवलोकन कर अपने को धन्य और कृतार्थ समझते थे। शान्त भाव से नीरव होकर सोचने की इच्छा आपमें अल्पवयस ही से देखी जाती थी। जैसे-जैसे बढ़ते गये, यह भाव आपमें पुष्ट होता गया। लोग इन गुणों को देखकर आपके स्वभाव से मुग्ध होने लगे और सब ज्ञानी दूरदर्शियों के मन में यह प्रतीत हो गया कि बालक केशव भविष्यत् में एक महान् पुरुष होंगे। इस कारण केशव लड़कपन ही से सब लोगों के स्नेह और श्रद्धा के भाजन हुए।

केशव जो काम करते थे उसे अति श्रद्धा और पवित्रता

के साथ करते थे। आपके बचपन में किसी प्रकार का अस्वाभाविक कृत्रिम भाव कभी नहीं देख पड़ता था। स्वाभाविक और सरल भाव से आप अपना जीवन बिताते थे और अपने कामों को किया करते थे। आपकी नीति और चरित्र बचपन ही से अति शुद्ध और पवित्र था। इसी कारण कोई दुश्चरित्र बालक आपसे मिलने का साहस नहीं कर सकता था, आप भी उनलोगों से दूर ही रहा करते थे। जो दुष्ट बालक धर्म का बाहरी आडम्बर दिखाकर आपको अपने वश में लाने की चेष्टा करते थे, आप उन्हे तुरत ही पहचान लेते थे और उनके मोहपाश से अलग हो जाते थे। इस कारण अहङ्कारी कहकर दूसरे-दूसरे बालक आपकी निन्दा करते थे; पर यथार्थ में आप दुष्टता के जाल से अलग रहकर सबों को अति प्रेम और सद्भाव से ही देखा करते थे। आपके चिर-संगी बालबन्धु महात्मा प्रतापचन्द्र मजुमदार महाशय ने आपके बचपन के विषय में इस प्रकार कहा है—"बचपन में केशव इतनी दूर ऊँचे उठे थे कि आपके समवयस्क बालक हमलोग आपको बिना श्रद्धा और भक्ति किये नहीं रह सकते थे। मालूम होता था कि आप हमलोगों के शिक्षक थे।" इस प्रकार बचपन ही में केशव के भविष्यत् जीवन की महत्ता देख पड़ी थी।

बचपन

कलकत्ते में आजकल जहाँ एलबर्ट हॉल है वहाँ पहले छोटे-छोटे बालकों के लिये एक पाठशाला थी। इसी पाठशाला में पहले पहल बालक केशव भर्ती हुए। इस पाठशाला के गुरुजी अति मनोयोग और शासन के साथ सब शिष्यों को पढ़ाते थे। गुरुजी का शासन देख केशवचन्द्र के हृदय में भी शासन करने का भाव जग उठा, सब के ऊपर आधिपत्य और अपनी इच्छा के अनुकूल सब को चलाने का भाव क्रमशः आपके अन्तर में प्रबल होता गया। बस, स्कूल के सभी बालक आपके अनुगत हो गये और आप उनके नेता बन उनके ऊपर अपनी विशेषता दिखाने लगे। केशव में यह एक बड़ी विशेषता बचपन ही से देख पड़ती थी कि आप जो कुछ सीखते थे उसे दूसरों को सिखाने को अत्यन्त व्यग्र रहते थे। जैसे-जैसे बढ़ते गये, आपका यह गुण विशेष रूप से आपके जीवन में पुष्ट होता गया। आप ने अपने जीवन-वेद में इस बात का स्पष्ट भाव से परिचय

भी दिया है। जीवन-वेद के शिष्य-प्रकृति शीर्षक १५वें परिच्छेद में आपने कहा है—"शिक्षक नहीं हुआ हूँ, इसलिये क्या चिरकाल स्वार्थपर की नाईं रहूँगा ? ज्ञान लाभ कर क्या किसी को नहीं दूँगा ? कृपण की नाईं क्या मेरा धन अँधेले में चिरकाल बन्द रहेगा ?"

केशव ने बालपन ही से विनीत रहना सीखा था। जो विषय आपको भला लगता था उसे उसी समय सीखकर दूसरों को सिखाने के लिये तत्पर रहते थे। आप प्रायः यह कहा करते थे—"मेरे अन्तर में ब्लाटिंग कागज की तरह एक वस्तु है उसके द्वारा दूसरों के सद्गुणों को सहज ही चूस ले सकता हूँ।" इसी उदार प्रकृति ने केशव को इतना महान् बनाया है। महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने आपके विषय में कहा है—"हमलोगों के मन में कोई भाव आने से हम उसे परिस्कृत रूप से प्रकाशित नहीं कर सकते हैं। यदि प्रकाशित करने में समर्थ हों, तो उसे कार्य में नहीं ला सकते। यदि कार्य में ला सकें तो उसे दूसरों से करा नहीं सकते हैं। परन्तु केशव ये सब कर सकते थे।" इस प्रकार के गुण केशव में अधिक परिमाण से वर्तमान थे।

पाठशाला में शिक्षा पाने के बाद केशव हिन्दू कौलेज में भर्ती हुए। यहाँ आपने बड़ी निपुणता के साथ विद्याभ्यास किया था। कौलेज के अध्यापक सब इनसे अति प्रेम और स्नेह करते थे। प्रति वर्ष आप यथायोग्य इनाम पाते थे। आपकी बुद्धि और प्रतिभा देखकर आपके आत्मीय जनों और बन्धु-बान्धवों को पूर्णतः प्रतीत हो गया था कि आपकी उच्च शिक्षा बड़ी

सफलता, योग्यता और प्रशंसा के साथ सम्पन्न होगी। परन्तु एक दुर्घटना के कारण इनकी शिक्षा में एक बड़ी बाधा पहुँची। हिन्दू कौलेज के अध्यक्षों में अनबन के कारण मेट्रेपोलिटन नाम से कलकत्ते के धनिकों ने एक दूसरा कौलेज स्थापित किया और हिन्दू कौलेज से छात्रों को बहकाकर इस कौलेज में लाने लगे और बिना जाँच किये ही उच्च कक्षा में छात्रों को भर्ती करने लगे। केशव के चचा ने भी केशव को हिन्दू कौलेज से हटाकर इस नये कौलेज की उच्च कक्षा में भर्ती कर दिया। यहाँ इन को अपनी शक्ति से अधिक काम करना पड़ा। साहित्य में तो आप अपना काम भली भाँति करते गये, परन्तु गणितशास्त्र में आप चार-पाँच वर्ष का काम एक वर्ष में करने में चूक गये।

अर्थ के अभाव से मेट्रेपोलिटन कौलेज जब उठ गया, केशवचन्द्र अपने साथियों के साथ फिर १८५४ ई० में हिन्दू कौलेज में भर्ती हुए। अब केशव अत्यन्त अध्यवसाय के साथ अध्ययन करने लगे। परन्तु अपने अभिभावक के दोष के कारण आप गणितशास्त्र में उदासीन हो गये और आपकी गणितशास्त्र की योग्यता कम हो गई। अन्यान्य विषयों में थोड़े ही समय में आपने अपनी त्रुटि पूरी कर ली। आपकी हाथ की लिखावट अति सुन्दर और स्वच्छ थी।

१८५६ में केशव जब सिनियर छात्रवृत्ति श्रेणी (आजकल की आई. ए. श्रेणी) में थे उस समय एक दुर्घटना हुई। परीक्षा के गार्ड (प्रहरी) ने केशव को बगल में एक दूसरे छात्र के साथ उत्तर को मिलाते हुए देखा, इसलिये उन्होंने आपको डाँटा और शेष परीक्षा देने में आपको अनुमति नहीं दी। इस विषय

में दूसरे छात्र और आपमें कौन पहला दोषी था, इसकी मीमांसा कुछ नहीं हुई। चाहे जो हो, केशव को इस व्यवहार से अति कष्ट हुआ। यद्यपि आपको फिर क्लास में आने की अनुमति मिली, पर इससे आपको शान्ति न हुई और आपकी प्रसन्नता लोप हो गई। अतएव आपने कौलेज की पढ़ाई छोड़ दी और स्वतन्त्र भाव से साहित्य, विज्ञान, तत्वज्ञान, दर्शन-शास्त्र इत्यादि का अध्ययन करने लगे। इस घटना से केशव के साथियों और अध्यापकों को बहुत कष्ट हुआ, क्योंकि आप सबके अति प्रेमपात्र थे।

१८५६ ई० से १८५८ ई० तक केशव हिन्दू कौलेज की लाइब्रेरी में स्वतन्त्र भाव से विशेष कर मनोविज्ञान और नीति-विज्ञान का अध्ययन करने लगे। इस समय आपको इस प्रकार अध्ययन में अध्यापक जोन साहिब से बहुत सहायता मिली थी, इस कारण आप जोन साहब के बहुत अनुगत और कृतज्ञ थे। प्राय. देखा जाता है जो लोग स्कूल-कौलेज की पढ़ाई समाप्त करते हैं अथवा किसी कारण वश पढ़ाई विना समाप्त किये विद्यालय छोड़ देते हैं, वे बेकार होकर इधर-उधर घूमा फिरा करते हैं और फिर पुस्तक से किसी प्रकार का सम्बन्ध तब तक नहीं रखते जब तक वे अपनी जीविका के निर्वाह के लिये किसी प्रकार के कर्मक्षेत्र में प्रवेश नहीं करते हैं। विरले ही कोई पाठ का सिलसिला जारी रखते हैं ; पर गम्भीर स्वभाव, चिन्ताशील और ज्ञानपिपासु केशव की ऐसी दुर्दशा नहीं हुई थी। विद्या और ज्ञानानुरागी केशव की अध्ययन के प्रति वासना और कामना दिन-दिन बढ़ती गई। आपमें बचपन के कारण जो-कुछ

चञ्चलता, आमोद, स्पृहा इत्यादि थीं वे सब धीरे-धीरे धीरता और गम्भीरता में परिणत हुईं। आपने इसी समय प्रायः १४ वर्ष की अवस्था में मत्स्याहार छोड़ दिया। आप वैष्णव-परिवार के बालक थे। अतएव मांस-भोजन आपने कभी नहीं किया था। इसी समय से आपने वह भी छोड़ दिया। आपके साथी आपको एक विज्ञानी पण्डित समझने लगे। आप जैसे-जैसे बढ़ने लगे, और भी चिन्ताशील, गम्भीर और एकान्त-प्रिय होते गये। आप क्रमशः ज्ञानियों का सहवास, विज्ञान-ग्रन्थों का पाठ और निर्जन चिन्तन को अत्यन्त प्यार करने लगे और पार्थिव विद्या, उपाधि, सम्मान, सुख-विलास, आमोद, क्रीड़ा, कौतुक, भोग इन सब की लालसा छोड़कर नैतिक चरित्रगठन और तत्त्वज्ञान की खोज में लगे।

यौवन

बालक केशव इस प्रकार सत् चिन्ता और सद्भाव के साथ यौवन-अवस्था में पहुँचे। परमेश्वर ने आपको आरम्भ ही से अपनी ओर आकृष्ट किया था। आपके सत् भाव और सत् चिन्तन ने अन्यान्य लक्ष्मीवाहनों की दुर्नीतियों और नाना प्रकार के पापों से बराबर आपकी रक्षा की थी। पुण्य के प्रति विशेष अनुराग, मिताचारिता और विवेक के प्रति श्रद्धा आपके जीवन के विशेष लक्षण थे। इन्हीं गुणों के कारण आपका स्वभाव चरित्र सर्वदा निर्मल और सुन्दर था। अपने जीवन के प्रत्येक कार्य को आप सर्वदा विधाता का आदेश समझकर करते थे; आमोद-विलास, गृहधर्मपालन, पाठ, कथावार्ता सब में आप परमेश्वर के दर्शन पाया करते थे। इसी कारण आपका प्रत्येक कार्य शुद्ध और पवित्र था। आपके सभी कार्यों में परमात्मा की झलक देख पड़ती थी। अपने गुरुजनों और अभिभावकों के प्रति आपकी विशेष श्रद्धा और भक्ति थी। इस प्रकार सद्गुण-सम्पन्न होने पर भी अहङ्कार ने आपको लेश मात्र भी स्पर्श नहीं किया था। आप सर्वदा विनय, नम्रता, कोमलता और माधुर्य के साथ अपना सभी कार्य किया करते थे। जब तक आपने स्वाधीन धर्म के अनुसार जीवन-यापन करने का अवलम्बन नहीं किया था, तब तक आप अपने अभिभावकों के अधीन ही अपने सारे काम किया करते थे।

१८५६ ई० के अप्रैल महीने में श्रीयुक्त चन्द्रनाथ मजुमदार

की कन्या के साथ आपका विवाह हुआ। कन्या नौ वर्ष की थी। आपने अपनी इच्छा से विवाह नहीं किया था। आपके अभिभावकों के मत के अनुसार यह विवाह हुआ था। पहले ही कहा गया है कि आप इस समय तक सम्पूर्ण रूप से अपने अभिभावकों के अधीन थे, और यही समझते थे कि इनलोगों ने जो भला समझा है वही किया है। परन्तु इस प्रकार के बाल्य-विवाह से आपको आनन्द और सन्तोष नहीं हुआ। तीन-चार वर्षों तक आपने वैवाहिक जीवन का आनन्द के साथ उपभोग नहीं किया था। इस विषय में आपने अपने जीवन-वेद में साफ तौर से कहा है,—"जिसमें कष्ट हो, गम्भीरता की वृद्धि हो, कुचिन्ता की ओर मन न जाय, मैं इन्हीं सब विषयों में नियुक्त होता था। ये सब कब हुए? अठारह, उन्नीस, बीस वर्ष की अवस्था में। जब विवाह कर संसार में प्रवेश करूँगा, जहाँ संसार में घर समझूँगा, देखा, वहीं श्मशान है। ससार के विषय में विशेष कुछ नहीं समझता था, पर संसार का भय जानता था। 'स्त्री आ रही है, संसार आरम्भ करना होगा। संसार के विलास में क्या तुम सुख-लाभ करोगे? क्या तुम स्त्री के निकट बैठे रहोगे? संसार की बात लेकर क्या तुम आलाप करोगे? क्या ये सब विषय तुमको सुखी करेंगे?' ठीक मेरे मन के भीतर मानो ये सब बातें कोई कहने लगा। मैंने समझा, जीवात्मा उच्च पदार्थ है, इसे क्या मैं स्त्री के अधीन करूँगा? इसे क्या संसार के अधीन करूँगा? प्रतिज्ञा की, इस जीवन में स्त्रैण नहीं होऊँगा, क्योंकि स्त्री के अधीन होकर वहुतों को वरवाद होते देखा है। संसार के वज्राघात से वहुतों की मृत्यु हुई है। इसी

लिये संसार को कहता हूँ कि इस मनुष्य को मत छुओ। इसीलिये उस दिन से भय के साथ संसार के साथ सम्बन्ध रखता हूँ। कब संसार की आसक्ति से मृत्यु के कवल में गिरूँगा, कब रुपया छूकर मरूँगा, इसका मुझे बहुत भय है।"

विवाह के एक वर्ष बाद आपके मन में वैराग्य का भाव अतिशय बढ़ गया था। इससे आपकी बालिका वधू के मन में बहुत दुःख और अशान्ति हुई थी। इसी समय और इसी अवस्था में केशव के भावी धर्म-जीवन का आरम्भ समझना चाहिये। आपके मन में दृढ़ विश्वास हो गया कि साधारण युवक की नाईं सुख-विलास में मग्न होकर जीवन-यापन के लिये ही मैं विधाता-द्वारा नहीं भेजा गया हूँ। आप भली भाँति समझने लगे थे कि ज्ञान-विज्ञान के गम्भीर तत्त्वों की सहायता से इस पृथ्वी पर पवित्र गार्हस्थ्य-वैराग्य का नूतन जीवन यापन करना प्रत्येक गृहस्थ का कर्तव्य है। इसी कर्तव्य की पूर्ति में आप प्राणपण से चेष्टा करने लगे। इस समय आपके मन में पवित्र नीति की एक ऐसी वेगवती धारा प्रवाहित होने लगी कि आप इस धारा के सम्पूर्ण रूप से वशीभूत हो गये।

आपकी ऐसी अवस्था देखकर आपके आत्मीयगण आपस में तर्क-वितर्क और आपकी आलोचना तथा उपहास करने लगे, परन्तु कोई भी आपकी इस धारा को रोक नहीं सका। इसी यौवन-काल में—जब प्राय: युवकवृन्द मानव-जीवन के उच्च आदर्श से उदासीनता दिखाकर संसार की ओर अन्धों की नाईं दौड़ते हैं, केशव ने भौतिक संसार से विमुख हो अपने को अमर-धाम की ओर लगा रक्खा था। आपने अपने जीवन में विधाता

की मङ्गल इच्छा के सम्पूर्ण रूप से दर्शन कर, अपने को परमेश्वर के चरण में समर्पित कर दिया।

केशवचन्द्र की नीति और कर्तव्य-पालन अत्यन्त तीक्ष्ण और प्रबल था, इसकी ओर आप सर्वदा सचेत और मनोयोगी रहा करते थे। केवल इतना ही नहीं, इस ज्ञान से आपके ईश्वर के प्रति विश्वास और धर्मपरायणता आपके जीवन के प्रत्येक कार्य से विलक्षण रूप से झलकती थी। आपके जीवन में प्रार्थना का भाव अति प्रबल था, जीवन सर्वदा प्रार्थनाशील और नीति-परायण था। आपने अपने जीवनवेद में कहा है—"यथार्थ धर्म क्या है, यथार्थ धर्म-समाज किसे कहते हैं, सो मैं नहीं जानता था। क्यों मैं प्रार्थना करता हूँ सो भी नहीं जानता था। परन्तु जब पहले मेरे निकट आदेश का आलोक आया, मैंने यही वाणी सुनी थी—'प्रार्थना करो! प्रार्थना करो। प्रार्थना के विना दूसरी गति नहीं है'।" इस प्रकार जीवन के आरम्भ-काल ही से आपने प्रार्थना के ऊपर अपने चरित्र को सङ्गठित किया था और इसी प्रार्थना के ऊपर आजन्म दृढ़ रूप से भरोसा कर अपने चरित्र को सर्वदा ब्रह्ममय और उज्ज्वल बना रक्खा था।

जिस प्रकार प्रार्थना का भाव आपके चरित्र से प्रस्फुटित होता था, उसी प्रकार वैराग्य का भाव भी सम्पूर्ण रूप से आपके चरित्र में झलकता था। आप सर्वदा प्रायः निर्जन वास करते थे। आपने कहा है—"वैराग्य का भाव लेकर मैंने संसार में प्रवेश किया था। ईश्वर के गृह में कठोर नैतिक शासनाधीन होकर मेरा दाम्पत्य जीवन बीता था।" आपके इस विषय में तनिक भी अत्युक्ति नहीं है। यौवन-काल के आरम्भ में तीन-चार वर्षों

तक आप वैरागी की नाईं अकेले धर्म-चिन्तन और शास्त्र-पाठ में अपना समय बिताते थे। समवयस्क मित्रों के साथ भी कभी आप आमोद्-क्रीड़ा अथवा अधिक वार्तालाप में समय नहीं गँवाते थे। अपनी धर्मपत्नी के साथ भी बहुत कम ही भेंट अथवा वार्तालाप करते थे। बाहर लोगों के साथ भी भेंट-मुलाकात अथवा कथा-वार्ता बहुत कम ही होती थी। लौकिकता आपमें किसी प्रकार की थी ही नहीं। इस कारण आपके साथी और दूसरे-दूसरे लोग अहङ्कारी कहकर आपकी निन्दा किया करते थे।

इस प्रकार केशव का चरित्र दिन-दिन शान्त भाव और गम्भीरता में परिपुष्ट होता गया। यद्यपि बाहर से आपके भावों को देखकर लोग आपको अहङ्कारी कह दिया करते थे, परन्तु आपका अन्त.करण विनय, नम्रता, प्रेम और सद्भाव से क्रमशः विकसित हो रहा था। यही भाव आपके भावी जीवन में महाव्रत पालन का अङ्कुर-स्वरूप था। इसीलिये आप सर्वदा कहा करते थे—"एक बार संन्यासी नहीं होने से कोई गृह-धर्म का प्रतिपालन नहीं कर सकता है। श्मशान के भीतर होकर नहीं जाने से कैलाश-शिखर पर नहीं चढ़ा जाता है।" आपने अपने जीवनवेद के चौथे अध्याय में कहा है,—"चौदह वर्ष की अवस्था ही में वैराग्य का प्रथम सञ्चार हुआ था। जब धर्म की वृद्धि होने लगी, उपासना का आरम्भ हुआ, ईश्वर के पद-तल में आश्रय पाया, तब पहले का बादल जो एक उँगली की नाईं जीवनाकाश में देख पड़ा था, जो केवल मत्स्य-परित्याग ही में समाप्त था, वही अब घनीभूत होने लगा।"

बचपन ही में इस प्रकार प्रबल धर्मभाव के कारण आपके

चरित्र में पाप और प्रलोभन का लेशमात्र भी न था। अन्यान्य युवकों की नाईं आपके चरित्र को किसी प्रकार के कलङ्क ने कभी दूषित नहीं किया था। आपके अभिभावक आपको इस प्रकार वैरागी और धर्मानुरागी देखकर आपके विषय में नाना प्रकार की आलोचनाएँ करने लगे और सब के भीतर एक प्रकार की अस्थिरता होने लगी। इस समय आपकी अवस्था अठारह वर्ष की थी। केशव ने एक निराला पथ ग्रहण किया। इसमें लोगों का उत्साह देना तो दूर रहा, बल्कि आपके इस पथ में वे बाधा-विघ्न डालने लगे। परन्तु सभी बाधा-विघ्नों को पार कर केशव अपने ईश्वर-प्रेरित पथ में दिन-दिन अग्रसर होते गये। कली फूल में परिणत हो चारों ओर सौरभ और सुन्दरता फैलाने लगी।

इसी समय केशव ज्ञान और नीति की शिक्षा फैलाने के लिये छोटी-छोटी सभाएँ किया करते थे और आपने अपने घर में एक विद्यालय भी स्थापित किया था। आपने रेभरेन्ड डाल, उड्र और लं साहिब और कौलेज के कतिपय अध्यापकों की सहायता तथा सहानुभूति से हिन्दू कौलेज के थिएटर भवन में 'ब्रिटिश इंडिया सोसायटी' नाम से एक सभा स्थापित की। यहाँ समय-समय पर धर्म के विषय में वक्तृता, तर्क और आलोचना होती थी। आप ही सभा के सभी आलोच्य विषय ठीक किया करते थे। इस सभा में ईसाई मत के प्रचारक और कौलेज के अध्यापक योग देकर अपना मतामत प्रकट करते थे। केशव की इस सभा की बदौलत १८५५ ई० में कलुटोला के सेन-भवन में एक दातव्य रात्रि-विद्यालय (free Night-school)

स्थापित हुआ था। सर्वसाधारण में ज्ञान और शिक्षा वितरण करना इस विद्यालय का मुख्य उद्देश्य था। केशव इसके रेक्टर (Rector) थे; और आपके अधीन प्रतापचन्द्र मजुमदार इत्यादि कई लोग प्रतिवेशी विद्यार्थियों को ज्ञान और नीति की शिक्षा देते थे। केशव स्वयं अँगरेजी साहित्य सिखाते थे और कभा-कभी धार्मिक शिक्षा दिया करते थे।

केशव धर्म-सम्बन्धी उपदेशों को नाट्य और अभिनय के द्वारा भी दिया करते थे। अभिनय के लिये चित्रपट-रंगमंच इत्यादि बनाने में आप स्वयं सहायता करते थे, और अभिनय में भी शामिल होते थे। इस विषय में भी आपका उत्साह अधिक था, और इस प्रकार आनन्द और आमोद के द्वारा आप सर्वदा साधारण लोगों के भीतर ज्ञान, धर्म और नीति की शिक्षा का प्रचार करते थे। निःस्वार्थ भाव से इस प्रकार धर्म-प्रचार के कार्य में आप सर्वदा लीन रहते थे। इसी नीति-विद्यालय में केशव ने अपने आत्मत्याग और परोपकार का प्रखर दृष्टान्त दिखाया था। पीछे १८५७ ई० में केशव ने इस विद्यालय के पहले दर्जे के छात्रों और शिक्षकों की एक सभा स्थापित की। इस सभा का नाम "गुड विल फ्रेटर्निटी" (Good will fraternity) था और इसमें धार्मिक विषयों की आलोचना होती थी। इसी सभा में केशव ने पहले पहल अँगरेजी में मौखिक वक्तृता देने का अभ्यास किया था। इस सभा में कभी-कभी आप धर्मशास्त्र और धर्म-प्रबन्ध पाठ किया करते थे। वक्तृता अथवा पाठ के समय आपकी आँखें और मुखमण्डल ज्वलन्त तेज और उत्साह की ज्योति से दमकने लगता था। आपके इस प्रकार उत्साह, तेजपूर्ण

वक्तृता और पाठ से आपके साथी युवकों के अन्तर में तेज और उत्साह, विश्वास और वैराग्य का सञ्चार हो जाता था।

ब्राह्मधर्म के अवलम्बन करने के पहले केशव ने अपने कई साथियों के साथ एक प्रार्थना-सभा स्थापित की। इस सभा में गुप्त भाव से एक निर्जन घर में रात को आप कतिपय बन्धुओं के साथ गम्भीर भाव से प्रार्थना करते थे। प्रार्थना के बाद केशव धर्म के विषय में कुछ बोलते थे। आपकी कथा सुनकर सभी धर्मभाव से गद्गद हो जाते थे। इस प्रकार इस प्रार्थना-सभा से अति अलौकिक फल हुआ। इसी सभा की बदौलत आपमें और आपके सहचरों में धर्म की पिपासा और स्वर्ग-राज्य की अभिलाषा घनीभूत होती गई और पीछे ये सब धर्मपिपासु विश्वस्त भक्त-मण्डली में परिणत हुए।

"गुड विल फ्रेटर्निटी" (Good will fraternity) सभा में एक दिन महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर गये थे। उन्होंने वहाँ जाकर सभ्यों को भली भाँति धार्मिक चर्चा और आलोचना में उत्साहित किया था। इसी समय से केशव और आपके बन्धुओं का महर्षि और ब्राह्मसमाज के साथ साक्षात्कार हुआ। इसके पहले इनमें से कोई ब्राह्मसमाज के विषय में भली भाँति नहीं जानता था। केशव बराबर अपना समय शास्त्र-पाठ में बिताते थे। इस प्रकार बाइबिल, दर्शनशास्त्र, विज्ञान और उपदेश पाठ से आप के अन्तर में क्रमशः एकेश्वरवाद में विश्वास और श्रद्धा घनीभूत होती गई। इसी समय ब्राह्म पंडित राजवल्लभ के साथ, जो प्राचीन पुरुष थे, केशव का परिचय हुआ और इनकी सहायता से आपने ब्राह्मसमाज की पुस्तिका पढ़कर देखा कि आपका मत

और विश्वास उसी समाज के मत के अनुकूल है। एक अद्वितीय निराकार परमेश्वर के निकट प्रार्थना को छोड़कर उद्धार का दूसरा कोई उपाय नहीं है। यह भाव आपके अन्तर में पहले ही से विकसित हो रहा था, जो ब्राह्मसमाज का सहवास पाकर और भी प्रबल और अटल हो गया।

१८५७ ई० में केशव ने ब्राह्मसमाज में प्रवेश किया और ब्राह्मधर्म में दीक्षा ली। इस अवसर पर आपने कहा है—"मैंने ब्राह्मधर्म का मूल सत्य स्वीकार कर इसमें विश्वास किया है।" इस समय महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर सिमला में थे। केशव ने ब्राह्मधर्म ग्रहण किया है, इसे सुनकर महर्षि को अत्यन्त आनन्द हुआ। महर्षि के पुत्र सत्येन्द्रनाथ ठाकुर केशव के सहपाठी थे। सत्येन्द्रनाथ ने अपने पिता को केशव के विषय में पूरा परिचय दिया था। इसके बाद महर्षि के साथ केशव का संसर्ग अति घनिष्ट होता गया। दोनों एक साथ हो ब्राह्मसमाज की सेवा अटल विश्वास और दृढ़ भक्ति के साथ करने लगे।

महर्षि केशव की विद्या, बुद्धि, स्वभाव, चरित्र, धर्मपिपासा और वक्तृताशक्ति देखकर आपको बहुत प्यार करने लगे। इससे केशव अत्यन्त उत्साहित हुए। यह देख आपके घर के लोगों को—विशेष कर आपकी माता को—अत्यन्त भय हुआ कि केशव कहीं वैष्णव धर्म छोड़कर विधर्मी न हो जायँ। आपकी ऐसी गति-मति देख घर और बाहर दोनों जगह लोग आपकी निन्दा करने लगे। तिरस्कार, दुर्नाम, घृणा और निर्यातन की सीमा नहीं रही, पर धर्मभीरु केशव अटल भाव से अपना कार्य करते गये।

धर्म-जीवन का विकास

महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर के साथ साक्षात्कार होने के बाद केशव की धर्मपिपासा उत्तरोत्तर प्रबल होती गई। जो कुछ आप पाठ अथवा आलोचना करते थे, वह केवल अपने धर्म-जीवन को सबल और पुष्ट करने के लिये ही करते थे। बाइबिल के पाठ में आपका प्रेम और अनुराग आश्चर्यजनक था। बाइबिल का पाठ और इसकी व्याख्या चामत्कारिक ढग से करते थे। आपने ईसाई धर्म का गूढ़ तात्पर्य और आध्यात्मिक अर्थ यथार्थ रूप से समझा था। यह देख बहुतों को भय हुआ कि केशव कहीं ईसाई न हो जायँ। यद्यपि केशव ने अपना धर्म-मत तथा परमार्थ तत्त्व बाइबिल, अँगरेजी-विज्ञान-शास्त्र इत्यादि के अध्ययन से उपार्जित किया था, आपकी धर्म-प्रकृति, निर्मल चरित्र और विशुद्ध स्वभाव ने देशीय धर्म-भाव के भीतर स्वयं परमेश्वर के ऊपर निर्भरता और विश्वास के कारण विकास को प्राप्त किया था, आप वैष्णव-परिवार में लालित पालित हुए थे, आपके परिवार में पौत्तलिक रूप से देव-देवियों की पूजा, कुसंस्कार की कल्पना और भ्रान्ति का साम्राज्य था, आपका बचपन इसी में बीता था, परन्तु आपके निर्मल जीवन की गति इन सब वाधा-विघ्नों को पार कर एकेश्वरवाद और निराकार परब्रह्म की पूजा तथा आराधना की ओर गई थी। यही प्रधान कारण है कि केशव इस प्रकार अँगरेजी शिक्षा में सम्पन्न, बाइबिल पाठ और व्याख्यान में निपुण, विशुद्ध ज्ञान और विचार में प्रवीण होकर

भी देशीय सदाचार और जातीय धर्मभाव के आजन्म पक्षपाती रहे थे, सब सदाचारों और सद्भावों के भीतर एक सामञ्जस्य भाव की स्थापना ही आपके जीवन का प्रधान अंग थी। जिनके अन्तर में यथार्थ भगवत भक्ति और भगवत् प्रेम का आविर्भाव होता है वे कदापि किसी सम्प्रदाय, अथवा किसी धर्म अथवा किसी पुरुष के विरोधी नहीं होते; जहाँ कहीं सद्गुण का प्रकाश रहता है उसी ओर वे आकृष्ट होते हैं। इस प्रकार विविध विज्ञानसम्पन्न केशव, जिन्होंने स्वयं भगवान् को अपना गुरु और नेता स्वीकार किया था, अपने देश, जाति और धर्म में अपने जीवन के आरम्भ ही से ऐश्वरिक सौन्दर्य और ऐश्वर्य दर्शन करते थे, और इस सौन्दर्य तथा ऐश्वर्य को विकसित करने के लिये आपने आजन्म चेष्टा की थी। अन्यान्य देशों, जातियों और धर्मों में जो सब रत्न प्रकाश अथवा अप्रकाश भाव से निहित हैं उन्हें अपनाकर भारत की शोभा बढ़ाने तथा भारत को उज्ज्वल और निर्मल करने का आपका प्रधान व्रत था।

केशव ने अद्वितीय-निराकार परमेश्वर की प्रत्यक्ष शक्ति में विश्वास और प्रार्थना पर अपने जीवन को स्थापित किया था। आप अपने जीवन के प्रति पल में ईश्वर को साक्षात् रूप से देखते थे। आपके ईश्वर न्याय-शास्त्र, युक्ति-तर्क के सिद्धान्त पर स्थापित नहीं थे। जिस प्रकार महायोगी, महात्माओं ने—ईसा, महम्मद, नानक इत्यादि भक्तों ने—ईश्वर का साक्षात् परिचय पाया था, केशव ने भी उसी प्रकार जीवन्त रूप से ईश्वर को प्राप्त किया था। परमेश्वर की विधातृ-शक्ति के ऊपर आपका प्रबल विश्वास था। आपको पूर्ण रूप से यह प्रतीत हो गया

था कि भगवान् प्रार्थना सुनते हैं। प्रार्थना का उत्तर देते हैं और मनुष्य अपने अन्तर में उनकी आदेश-वाणी सुनते हैं। आपने इस विषय में साफ तौर से अपने जीवनवेद के पहले अध्याय 'प्रार्थना' में कहा है—"जिस समय किसी ने सहायता नहीं की थी, जिस समय किसी धर्म समाज में सम्यक् रूप से प्रविष्ट नहीं हुआ था, धर्मों को विचार कर किसी एक का ग्रहण नहीं किया था, साध्य अथवा साधक श्रेणी में नहीं गया था, धर्म जीवन की उसी ऊषा-काल में 'प्रार्थना करो, प्रार्थना करो' यही भाव, यही शब्द हृदय के भीतर उठा था।" इसी भाव ने आपको भगवान् के इतना निकट पहुँचाया था। केशव का सारा ज्ञान और धर्मभाव इसी प्रार्थना और ईश्वर के आदेश के ऊपर स्थापित है।

जैसे जैसे प्रार्थना और आदेश का भाव प्रबल होता गया, वैसे-वैसे आपके अन्तर में वैराग्य का भाव भी बढ़ता गया। यौवन-काल के नाना प्रकार के सुख-भोग, आमोद-आनन्द, विलास इत्यादि आपको छू नहीं सके। संसार का भय मालूम हुआ। संसार में रहकर भी उसके पाश से अपने को अलग रक्खा। इस प्रकार संसार से अलग हो, अन्तर में भगवान् का आदेश सुनकर उस आदेश के अनुसार अपना साधन करने लगे। इसी समय स्वाधीनता का सचार हुआ। आपने प्रतिज्ञा की, संसार के अधीन नहीं होऊँगा। स्त्री, धन, मान आदि सांसारिक कामनाओं के वशीभूत न होऊँगा। इसी अवस्था में ईश्वर की करुणा आपके ऊपर अवतीर्ण हुई। भगवान् की आदेश-वाणी आपने सुनी। घोर विपाद और दुःख के भीतर शान्ति उपस्थित हुई।

केशव ने किसी पुस्तक पाठ अथवा किसी गुरु के उपदेश से इस प्रकार की अवस्था नहीं प्राप्त की थी। आपके अन्तर में इस प्रकार का भाव आप-से-आप उत्थित हुआ और आपने अन्तर में स्पष्ट रूप से सुना—"यदि परित्राण चाहते हो तो प्रार्थना करो, ईश्वर को छोड़कर पापी की रक्षा दूसरा कोई नहीं कर सकता है।" ज्योंही आपने इस प्रकार की आदेशवाणी सुनी, आप अति नम्र और कोमल हो गये। आपके अन्तर से गर्व और अहङ्कार का लोप हो गया। उसी समय आनन्दमय परमेश्वर का आनन्द और सुख आपको स्पर्श करने लगा। अत्यन्त विनीत हृदय के साथ गुप्त भाव से प्रातःकाल और रात्रि के समय प्रार्थना करने लगे। आपने अपनी इस अवस्था को अपने बन्धु-बान्धवों के निकट प्रकट नहीं किया था; क्योंकि आप जानते थे कि केवल इसमें उपहास ही का भय नहीं था, बल्कि लोग इस भले अनुष्ठान में आपको बाधा पहुँचा सकते थे।

इस प्रकार प्रार्थना करते-करते केशव ने देखा कि मानों आलोक की धारा आपके हृदय के गभीर से गभीर प्रदेश में प्रविष्ट हो आत्मा के सब प्रकार के अँधेरे को दूर कर रही है। इस अवस्था की वर्णना आपने इस प्रकार की है—"अहो! दिगन्त व्यापी इस भयङ्कर पापान्धकार के भीतर कैसा उल्लासकर चन्द्रालोक का प्रवाह है!" इस अवस्था में आपने अत्यन्त शान्ति और अनिर्वचनीय सुख का अनुभव किया था। इस समय पान, भोजन, आनन्दजनक, बन्धुओं का सहवास और शयन शान्तिप्रद हुए। केशव ने स्वीकार किया है कि प्रार्थना ही मुक्ति लाभ की पहली सीढ़ी है। प्रार्थना ही के द्वारा आप सत्य को

खोज में प्रवृत्त हुए थे। प्रार्थना ही ने आपको धर्मशास्त्र और धार्मिक मनुष्यों के साथ परिचित कराया था और आप प्रार्थना ही के भीतर से भगवान् की कृपा से साधन के उपायों का लाभ कर भगवत् चरण में अग्रसर हुए थे।

इस प्रकार के साधनों द्वारा केशव की दृष्टि अपने अन्तर की ओर पड़ी। आप अपने अन्तरतम में प्रवेश करने लगे। ज्यों-ज्यों आपने अपने अन्तर में गोता लगाया, अन्तर के रिपु स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ने लगे। उनके साथ संग्राम में रत हुए और उनपर जय लाभ किया। इस प्रकार केशव जीवन के महाव्रत-पालन में अग्रसर हुए। अनुताप और वैराग्य का ह्रास होने लगा, शान्ति-धारा बहने लगी। साधन के साथ-साथ—भगवत् आलोक के उपार्जन के साथ-साथ आपका प्रचार और वितरण आरम्भ होने लगा। जैसे ही भगवान् के निकट से आप कोई रत्न लाभ करते थे, वैसे ही इसे कृपण की नाईं केवल अपने निकट नहीं रखकर, मानव-मण्डली का कल्याण और सुख समझकर, व्यग्रता और उत्साह के साथ इसका प्रचार करते थे। इस विषय में आपने अपने जीवनवेद के पन्द्रहवें अध्याय में कहा है—"शिक्षक नहीं हुआ हूँ इसलिये क्या चिरकाल स्वार्थपर के ऐसा रहूँगा? ज्ञान लाभ कर क्या किसी को नहीं दूँगा? कृपण की नाईं क्या मेरा धन अंधकार में चिरबद्ध रहेगा? 'ग्रहण-मन्त्र' का साधन किया, 'प्रदान-मन्त्र' मैंने कभी नहीं लिया। 'दान' मेरा मूल मन्त्र नहीं है। सत्य आने ही से बाहर होगा, यही स्वभाव का नियम है।" इस उक्ति में भी परमेश्वर के ऊपर आपका सम्पूर्ण विश्वास और भरोसा गूढ़

रूप से निहित है। यहाँ भी आपके जीवन में ईश्वर की वाणी और आदेश की महिमा का परिचय पाते हैं।

आप 'गुड विल फ्रेटर्निटी' सभा में अति उत्साह और शक्ति के साथ काम करते गये। यहीं आपके प्रचार कार्य का आरम्भ हुआ। इस समय आपने यह प्रस्ताव किया,—"प्रत्येक सभ्य को प्रार्थना करनी उचित है।" सभी कोई जानते थे कि केशव अति लज्जाशील और अल्पभाषी युवक हैं। आपके इस प्रस्ताव को सुनकर सभी चकित हो गये। केशव इसी समय से क्रमश. वक्तृता देने लगे, जिसका फल यह हुआ कि पीछे आप एक उत्तम वक्ता हो गये। अपने बन्धुओं को अपने मत में लाने के लिये आप नाना प्रकार के उपायों का अवलम्बन करने लगे। आपके सभी साथी आपके कार्यों में सहयोग और सहायता देने लगे। बचपन ही से आपमें एक ऐसी तेजोमयी शक्ति थी कि जिसके कारण आप अपने सब साथियों को इकट्ठा कर उनसे अपना काम करा लेते थे। इस प्रकार अपने बन्धुओं की सहायता से आपने आजन्म भगवान् की महिमा और धर्म-शिक्षा का प्रचार सारे भारतवर्ष में किया था।

ब्राह्मसमाज के साथ योगदान

१८५७ ई० में केशवचन्द्र ब्राह्मसमाज के साथ सम्मिलित हुए थे। उसी समय से भगवान् आपको अपना सत्य प्रचार करने के लिये अनुपम शक्ति और उत्साह से सुसम्पन्न करने लगे। सत्यधर्म का बीज क्रमशः आपके अन्तर में अंकुरित होने लगा। इस पथ में नाना स्थलों से नाना प्रकार के बाधा-विघ्न भी आपके सम्मुख उपस्थित होने लगे। केशव अभी तक अपने आत्मीय अभिभावकों के अधीन थे। हिन्दू समाज और संसार के बन्धनों से अभी तक मुक्त नहीं हुए थे। आपके अभिभावक उस समय के कट्टर हिन्दू और तेजस्वी पुरुष थे। हिन्दू-परिवार और घर में आपका वास था, आपके सहचर उस समय की रीति-नीति में बद्ध और अन्तर्भुक्त थे। इस प्रकार की अवस्था में केशव के अन्तर में ब्रह्माग्नि अति प्रचण्ड रूप से जल उठी थी। इस अग्नि की लहर चारों ओर फैलने लगी। भगवान् की महिमा अपार है। इस अग्नि-शिखा की रश्मि अन्धकार को भेद कर क्रमशः अग्रसर होने लगी; सभी प्रकार की बाधाओं को भस्मीभूत कर अपना मार्ग साफ करने लगी। जितनी ही अधिक बाधाएँ मिलती थीं, उतना ही अधिक तेज और बल अन्तर से प्रकाशित होने लगा। परमेश्वर की लीला अद्भुत है, मालूम होता था कि बाधा-विघ्न इस अग्नि को तीव्र करने ही के लिये उपस्थित किये गये थे। भगवान् किस प्रकार अन्ध-

कार के भीतर अपनी महिमा घोषित करते हैं, महात्मा केशव के जीवन से यह बात आसानी से मालूम होती है।

इसी समय अभिभावकों ने परिवार के धर्म के अनुसार आपको दीक्षित करने के लिये स्थिर किया। घर में आपकी दीक्षा के लिये सब तैयारियाँ की गईं। मन्त्र देने के लिये गुरु उपस्थित हुए। सब ने यही समझा था कि केशव को प्रचलित हिन्दू-धर्म में दीक्षित करके परिवार की प्रचलित रीति, नीति, विधि इत्यादि में आबद्ध रक्खेंगे, पर परिवार की यह कामना किसी प्रकार फलीभूत न हुई। यह पहले ही कहा गया है कि विवाह ने केशव के उर-अन्तर में वैराग्य का बीज वपन किया था। अब पौत्तलिक रूप से गुरुमन्त्र द्वारा हिन्दू-धर्म मे दीक्षा की बारी पहुँची। गुरु-मन्त्र ग्रहण करने के लिये परिवार के सभी लोग आपको बाध्य करने लगे। आपकी माता आपकी दीक्षा के लिये बहुत व्याकुल और चिन्तित हुई। आपके पिता की मृत्यु के बाद आपकी माता बहुत दुःख और दीनता के साथ अपनी छोटी-छोटी सन्तानों को लेकर दिन काटती थीं। इन्हें भय था कि यदि केशव परिवार के हिन्दू-धर्म को न मानें तो इन्हें बड़े दुःख का सामना करना पड़ेगा। अतएव केशव की दीक्षा के लिये ये बड़ी चिन्तित और व्यग्र थीं। इसीलिये केशव की दीक्षा का प्रबन्ध किया गया था। आपको इस प्रकार की दीक्षा मे अनिच्छुक और अपनी प्रतिज्ञा में अटल एवं स्थिर देख, आपके अभिभावक और आत्मीय जन आपपर अत्यन्त क्रुद्ध हुए; और बल-पूर्वक आपकी दीक्षा का आयोजन करने लगे; पर जितना ही आपको भय दिखाया गया था, जितना ही आप गुरु-मन्त्र

ग्रहण करने को वाध्य किये गये थे, उतनी ही दृढ़ता के साथ 'नहीं' कहकर आपने गुरु के निकट मन्त्र-दीक्षा का सारा प्रबन्ध विफल कर दिया था।

महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर के साथ केशव का योग दिन-दिन घनिष्ठ हो रहा था। प्राय. प्रति दिन केशव महर्षि के यहाँ जाया करते थे। आपने देखा कि घर में दीक्षा का सब प्रकार से आयोजन हो रहा है। बस, जो दिन दीक्षा के लिये ठीक था उस दिन आप महर्षि के यहाँ गये और वहीं रह गये, घर नहीं लौटे। गुरु-मन्त्र द्वारा दीक्षा का सारा आयोजन घर में ठीक था, पर केशव घर में नहीं थे। सारा दिन बिताने के बाद दस बजे रात को केशव अपने घर लौटे। यह देख मन्त्रदाता गुरु ठाकुर निराश हुए और आपकी माता अति दुःखित हुईं; किसीने कुछ नहीं कहा। इस प्रकार आपको प्रचलित हिन्दूधर्म में दीक्षित करने की चेष्टा विफल हुई। दूसरे दिन केशव अपनी माता के निकट कई पुस्तकें रखकर चले गये। माता ने उन पुस्तकों को पढ़ा और देखा कि उनमें यथार्थ और सारगर्भित बातें लिखी हुई हैं। ये पुस्तकें, मालूम होता है, सङ्गीत की पुस्तकें थीं। धर्मानुरागिणी जननी का मन इन सार बातों की ओर आकृष्ट हुआ। इन्होंने पहले सुना था कि केशव ब्राह्म-धर्म का अवलम्बन करेंगे, गुरु के निकट मन्त्र-ग्रहण नहीं करेंगे; पर माता ब्राह्म-धर्म, ब्राह्म-समाज क्या है यह सब कुछ भी नहीं जानती थीं। ये अति सरल प्रकृति की स्त्री थीं, धर्म में इनकी अति निष्ठा और अनुराग था। ये उन किताबों को पढ़कर गुरुदेव के निकट ले गईं और कहा—"मैं तो कुछ नहीं

समझती हूँ। देखिये, केशव ने किस धर्म का अवलम्बन किया है?" गुरुदेव ने उन्हें पढ़कर कहा—"यह धर्म तो बहुत अच्छा मालूम होता है; परन्तु इसका यदि पालन करें तब न। जो हो, मातः! आप चिन्ता न करें। केशव ने जिस पथ का अवलम्बन किया है उससे मङ्गल होगा।" यह सुन केशव की माता को शान्ति मिली। इसके बाद ये केशव के निकट बार-बार इन सब बातों पर आलोचना करने लगीं। यह देख दूसरी-दूसरी स्त्रियाँ आपकी माता की निन्दा करने लगीं और कहने लगीं कि केशव की माता ही केशव को अनुचित आदर देकर उसे नष्ट कर रही हैं।

केशव अपनी माता के बड़े भक्त थे। आपकी माता भी आपको अति प्यार करती थीं। इस बड़े परिवार में केशव ने केवल अपनी माता से ही सहायता पाई थी। माता जब धर्म भाव में पुत्र के साथ सहानुभूति दिखाने लगीं, तब केशव ने कई प्रार्थनाएँ लिखकर माता को दीं और प्रति दिन उनका पाठ करने को कहा। माता प्रति दिन उनका पाठ करती थीं। वे लिखी हुई प्रार्थनाएँ कागज में लिखकर दीवाल में चिपकाई गई थीं। एक दिन जब आपके चचा (ज्येष्ठतात) ने देखा, वे अत्यन्त क्रुद्ध हुए और कहा कि यह केशव का काम है। यह कहते हुए उस कागज को उखाड़कर फाड़ फेंका। केशव की माता ने केशव से फिर लिख देने के लिये अनुरोध किया, पर केशव यह सुनकर गम्भीर और चुप रहे। फिर आपने लिखकर अपनी माता को नहीं दिया था। केशव अति उत्साह और उद्योग के साथ पौत्तलिकता और कुसंस्कार के विरुद्ध युद्ध करने लगे। इसी समय से कलूटोला के सेन-परिवार में किसी युवक ने गुरु-

मन्त्र का ग्रहण नहीं किया था। इसी परिवार के आपके छोटे भाई कृष्णविहारी सेन और आपके बड़े भाई के पुत्र नन्दलाल सेन और प्रमथलाल सेन ने अत्यन्त श्रद्धा के साथ ब्राह्मधर्म की सेवा कर अपने को उज्ज्वल किया है।

यह तो कह चुके हैं कि महर्षि देवेन्द्रनाथ के साथ केशव का योग दिन-दिन बढ़ता जा रहा था। जब महर्षि ने जाना कि केशव ने अपने परिवार के प्रचलित नियम के अनुसार गुरु-मन्त्र नहीं लेकर अपने विश्वास का पूरा परिचय दिया और परिवार-वर्ग के उत्पीड़न को अति वीरता और उत्साह के साथ सहने को कटिबद्ध हुए तब उन्होंने आन्तरिक प्रेम के साथ आपका अभिनन्दन किया था। महर्षि केशव की परीक्षा और उत्पीड़न की बातें सुनकर अत्यन्त सहानुभूति की बातों द्वारा आपको सान्त्वना और उत्साह देने लगे। इस प्रकार के मिलन से महर्षि और केशव की धर्म-बन्धुता दिन-दिन गाढ़ी एवं सुमधुर होने लगी।

केशव का कार्य केवल एक ही प्रकार का नहीं था। मनुष्य का दु:ख किस प्रकार दूर होगा, कैसे समाज से नाना प्रकार के कुसंस्कार दूर होंगे, किस प्रकार सत्कर्मानुष्ठान के द्वारा मानव-समाज का अन्धकार दूर होगा इसी चिन्ता में आप दिवारात्रि लीन रहते थे। विधवा की शोच्य अवस्था ने आपके कोमल हृदय को स्पर्श किया, बस, विधवा-विवाह-प्रथा के लिये आप उद्योग करने लगे। आपने एक विधवा-विवाह नाट्य का अभिनय किया। इस कार्य में भी आपकी दक्षता वैसी ही थी जैसी धर्म-क्षेत्र में। नाट्य-अभिनय कार्य आप अति सुन्दर और सुचारु-रूप से कर सकते थे। आपका 'नव वृन्दावन' अभिनय इस विषय

में भली भाँति आपकी क्षमता दिखा रहा है। आप विधवा-विवाह नाटक अति सफलता के साथ एक वर्ष तक करते रहे। जिस प्रकार नव वृन्दावन नाटक से कलकत्ते के सभी लोग मुग्ध हो गये थे, 'विधवा विवाह' अभिनय ने भी सब को चमत्कृत कर दिया था। विद्यासागर इत्यादि बड़े-बड़े लोग इसे देखकर अति सन्तुष्ट हुए थे। केशव ने ही विधवा-विवाह का बीज वपन किया, इसे उस समय कौन जानता था ? इस प्रकार केशव ब्राह्म-विद्यालय, नाट्य अभिनय, नैश विद्यालय और "गुड विल फ्रेटर्निटी" संस्था के कार्यों में सर्वदा तन-मन से लगे रहते थे। क्या वैराग्य, क्या आमोद, क्या धर्मज्ञान चर्चा, क्या अध्य-यन-अध्यापन, क्या समाज-संस्कार, क्या सत्कार्यानुष्ठान सभी शुभ विषयों में पूरे सामञ्जस्य के साथ केशव का हाथ देख पड़ता था। मालूम होता था कि मानो केशव सत्कर्मों के अवतार हों।

१८५९ ई० को २४वीं अप्रैल को केशव ने युवकों की धर्म-शिक्षा के लिये मृत गोपाल मल्लिक के घर में एक ब्राह्म-विद्यालय खोला। इसी घर में आप नाटक भी किया करते थे। जो पहले नैश विद्यालय (Night school) के छात्र और शिक्षक थे, और पीछे "गुड विल फ्रेटर्निटी" के सभ्य हुए और केशव को नाटक में सहायता करते थे, उनमें से बहुत-से उत्साही युवक ब्रह्मविद्यालय के छात्र हुए थे। इस ब्रह्मविद्यालय की बुनियाद कलुटोला के नैश विद्यालय ही में हुई थी, पीछे नियमित रूप से मृत गोपाल मल्लिक के घर में इसका कार्य आरम्भ हुआ। पीछे आदि समाज के दोमंजिले के ऊपर इसका कार्य होता था। यहाँ प्रति सप्ताह महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर बङ्गला

भाषा में ईश्वर तत्त्व और ब्राह्मधर्म का मत और विश्वास पर तथा केशव अँगरेजी में धर्म-विज्ञान पर वक्तृता देते थे। इसी ब्रह्म-विद्यालय के छात्र पीछे सङ्गत-सभा और भारतवर्षीय ब्राह्म-समाज के तेजस्वी और उत्साही सभ्य एवं प्रचारक हुए थे जिन्होंने अपने यथार्थ ब्रह्मनिष्ठ जीवन द्वारा ब्राह्मसमाज की वार्ता के प्रचार करने में अपना सर्वस्व त्याग किया था और इस महान् कार्य में अपने प्राण तक निछावरकर देने के लिये तैयार थे।

यही ब्रह्मविद्यालय अनेक युवकों को कुपथ से सुपथ में लाया था। जो इधर-उधर नाना प्रकार के असत् मार्गों में भटक रहे थे, नास्तिकता, कुसंस्कार इत्यादि के क्रोड़ में आश्रय ले रहे थे, केशव के ब्रह्मविद्यालय ने उनका उद्धार किया था। इस समय कौलेजों और स्कूलों के छात्रों में ब्राह्मधर्म के विषय में एक भारी तहलका मचा था। बहुत-से युवक जो हिन्दू-धर्म नहीं मानते थे और जिनका विश्वास ईसाई धर्म पर भी नहीं था, केशव की वक्तृता सुनकर और पढ़कर आपके संसर्ग में आये और अविश्वास और नास्तिकता के ग्रास से बचे। ईसाई धर्म का प्रचार इस समय अति तेज और उत्साह के साथ हो रहा था। केशव के द्वारा ब्राह्मधर्म का व्याख्यान और विवरण ईसाई धर्म के प्रचार में एक प्रकार बाधास्वरूप हुआ था। धर्मपिपासु केशव चिन्तन और अध्ययन द्वारा ब्राह्मधर्म को सब के लिये सहज और सुलभ बनाने की चेष्टा करने लगे। आप कलकत्ते के पुस्तकालय में धर्म-विज्ञान-संबंधी ग्रन्थों का पाठ कर एकेश्वर वाद मत पर ब्रह्मविद्यालय में व्याख्या करके सबको यथार्थ ब्रह्मपूजा की ओर आकृष्ट करने लगे।

राजा राममोहन राय ने ब्राह्मधर्म की नींव डाली थी। उन्होंने एक निराकार अद्वितीय ब्रह्म की उपासना, जिसे उस समय लोग भूल रहे थे, मानव-समाज में स्थापित करने की व्यवस्था की थी। इसके बाद महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर उपनिषद् के धर्म-भाव और ब्रह्मज्ञान की उपलब्धि सामाजिक पूजा एवं उपासना के द्वारा मनुष्यों के निकट उपस्थित कर रहे थे। इसे छोड़ तत्त्व-शास्त्र, साधन, भजन, आलोचना, चिन्तन, मनन रहन-सहन इत्यादि के विषय में किसी प्रकार की व्यवस्था न थी। ब्राह्म-समाज का आकार उस समय ऐसा नहीं था जैसा कि हमलोग आजकल उसे देखते हैं। उस समय के ब्राह्म सप्ताह में एक दिन उपासना-लय में उपासना किया करते थे, पर उनका आचार-व्यवहार क्रिया-कलाप किसी पृथक् निर्दिष्ट रीति के अनुसार नहीं होता था। महर्षि ने कतिपय नियम बनाये थे, पर ये नियम चालू न थे। केशव ने ब्राह्मधर्म का संस्कार किया और इसे नियमबद्ध किया। आप नियमों को बनाकर स्वयं भी पालन करते थे और ब्राह्म-समाज के सभ्यों को उन नियमों के पालन करने के लिये बाध्य किया करते थे। इसीलिये आप सबसे पहले साधारण सहज ज्ञान भूमि का अनुसन्धान करने लगे और ब्रह्मविद्यालय में प्रत्यादेश, प्रायश्चित्त, परकाल, मुक्ति, प्रार्थना, विश्वास, भक्ति इत्यादि गूढ़ तत्त्वों की मीमांसा और आलोचना कर समझाने लगे। आपकी व्याख्या ऐसी होती थी कि उसमें कठिन-कठिन शब्द रहते थे जरूर, पर अल्प-शिक्षित लोग भी आपके भाव को समझ लेते थे, उनमें ज्ञान का संचार होता था और वे धर्म-साधन में उत्तेजित हो जाते थे। इस प्रकार पाँच वर्षों

तक केशव ने ब्रह्म-विद्यालय में पवित्र ज्ञान और धर्म-नीति का प्रचार किया था। इसी ब्रह्मविद्यालय की सहायता से केशव ने ब्राह्मधर्म का मत और अटल विश्वास सार्वभौम रूप से सत्य के ऊपर प्रतिष्ठित किया था। इस विद्यालय में शिक्षार्थियों की परीक्षा नियमित रूप से होती थी। इस परीक्षा में आत्म-तत्त्व, धर्म-विज्ञान, मनोविज्ञान, दर्शनशास्त्र इत्यादि गूढ विषयों के अति सूक्ष्म और गूढ़ प्रश्न पूछे जाते थे। केशव को इस कार्य में अति कठिन परिश्रम करना पड़ा था और इससे आपका शरीर दुर्बल हो गया था। इस प्रकार अध्ययन और शिक्षा-दान से आपकी आँखों की दृष्टि शक्ति कम हो गई थी और शेष में आपको चश्मे का व्यवहार करना पड़ा था। ऐसी अवस्था होने पर भी आपके उत्साह और आध्यात्मिक शक्ति में तनिक मात्र भी कमी नहीं हुई थी; बल्कि आपका अनुराग दिन-दिन बढ़ता ही गया।

केशव के इस प्रकार के उद्योग से ब्राह्मसमाज में एक अति आश्चर्यजनक परिवर्तन उपस्थित हुआ था, और इसका प्रभाव साधारण जन-समाज पर भी पड़ा था। युवकों ने असदाचार का परित्याग कर सात्विक आचरणों का ग्रहण किया था। सर्वदा आत्मउन्नति के लिये आपमें तेजपूर्ण चेष्टा और व्याकुलता देख पड़ती थी। अनाचारों के प्रति आपकी घृणा बढ़ने लगी। जिस समय केशव धर्मशास्त्र-अध्ययन, धर्मज्ञान-प्रचार और युवकों को धर्म-पथ पर ले जाने में लगे हुए थे, आपके अभिभावक आपको तत्कालीन प्रचलित पथ से हटाने की चेष्टा कर रहे थे। उनलोगों ने सोचा कि किसी नौकरी में लगा देने से केशव परिवार के आश्रमधर्म में आ जायँगे।

केशव ने अपने अभिभावकों की उत्तेजना और वश में पड़कर १८५९ई० की पहली नवम्बर को बङ्गाल बैंक में ३० रुपये के महीने पर एक नौकरी स्वीकार की। आप अपना कार्य बैंक में अति निपुणता के साथ करने लगे, आपकी हस्तलिपि अति सुन्दर थी। इसे देख बैंक के सेक्रेटरी (Secretary) ने आपका वेतन ५०) रुपये मासिक कर दिया। आपके असल काम धर्म-प्रचार में यह नौकरी आपके लिये वाधास्वरूप थी; परन्तु अवसर पाने ही से आप अपना असल काम करते थे। इस समय आपने कई छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ अँगरेजी में लिखी थीं। "हे बङ्गीय युवको ! यह तुम्हीं लोगों के लिये है" नामक पुस्तिका आपने इसी समय लिखी थी। आपकी पुस्तकों को पढ़कर और आपके साथ इस विषय में वार्त्तालाप कर आपके दफ्तर के प्रधान-प्रधान कर्मचारी भी आपको प्यार और श्रद्धा की दृष्टि से देखने लगे। बङ्गाल बैंक का एक नियम है कि वहाँ की गुप्त बात कोई किसी के निकट प्रकट नहीं करेगा। इसके लिये कर्मचारियों को एक अङ्गीकारपत्र लिखना पड़ता है। सभी कर्मचारियों ने इस प्रकार के अङ्गीकारपत्र पर दस्तखत किया था, परन्तु केशव और इनके साथी प्रताप इसपर सहमत नहीं हुए। बैंक के दीवान ने आपको अत्यन्त भय दिखाकर दस्तखत करने के लिये समझाया, पर आप इसपर राजी नहीं हुए। पीछे दीवान ने अपनी जवाबदेही से रिहा पाने के लिये इन दोनों युवकों को बैंक के सेक्रेटरी साहब के निकट भेज दिया। साहब ने अङ्गीकारपत्र पर दस्तखत नहीं करने का कारण पूछा। केशव ने अति शान्त और नम्र भाव से—पर निर्भय होकर—कहा—"बैङ्क में काम करूँगा, और यहाँ की कोई बात किसी को

नहीं करूँगा, यह नहीं हो सकता।" यह बात सुनकर साहब अति प्रसन्न हुए और अन्तर से आपके प्रति श्रद्धा प्रकट की और आपको अङ्गीकारपत्र पर दस्तखत करने से छुटकारा मिला, पर अपने सांसारिक सुख भोग के लिये नौकरी कर रुपया उपार्जित करेंगे, ऐसी लालसा आपकी कभी न थी। केवल अपने अभिभावकों के अनुरोध और वश में पड़कर आपने इस नौकरी को सकारा था। आप अपने को भगवान् की चाकरी में उत्सर्ग करेंगे यही आन्तरिक वासना आरम्भ ही से आपके अन्तर में पुष्ट हुई थी। इस महान् व्रत में बङ्गाल बैंक की नौकरी आपके लिये एक बाधास्वरूप थी, अतएव १८६१ ई० की पहली जुलाई को केशव बैंक की नौकरी छोड़कर अपने असल स्वाभाविक कर्म-भूमि में आ डटे। जिस समय आपने नौकरी छोड़ने की इच्छा सेक्रेटरी साहब से प्रकाशित की थी, आपको कहा गया था—"नौकरी मत छोड़ो, एक सौ रुपये वेतन दिया जायगा।" केशव ने जवाब दिया था—"नहीं। पाँच सौ रुपये देने पर भी अब नौकरी नहीं करूँगा।"

नौकरी छोड़कर केशव ने अपने को सम्पूर्ण रूप से ज्ञान-धर्म-प्रचार के व्रत में उत्सर्ग किया। अपने धर्म-बन्धुओं को भी आपने अपने साथ लिया। केशव को इस प्रकार ईश्वर के कार्य में कटिबद्ध देख आपके बन्धुओं और साथियों ने आपका साथ लिया। केशव ने इस प्रकार ब्राह्मसमाज का एक प्रचारक दल स्थापित किया। इस दल का प्रधान आप स्वयं थे। ब्राह्मधर्म प्रचार करने की इस प्रकार की विधि केशव ने पहले-पहल की। इसके पहले ब्राह्मसमाज का कार्य पहले राममोहन और महर्षि

देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने-अपने विषयकार्यों के साथ-साथ किया था, पर केशव और आपके साथी प्रचारक दल ने विषय-कार्य को छोड़ सम्पूर्ण रूप से वैरागी हो ब्राह्मसमाज का कार्य करने के लिये अपने को उत्सर्ग किया।

केशव अब सम्पूर्ण स्वाधीन भाव से केवल ईश्वर के अधीन हो अपना कार्य करने लगे। आपने देखा कि आपके आत्मीय अभिभावकों के मन्तव्य, शिक्षा और परामर्श आपके यथार्थ कार्यों में बाधास्वरूप हैं; अतएव अब आप उनसे स्वाधीन हो ईश्वर के आदेश के अनुसार चलने लगे। विषय-सम्पत्ति की आशा और प्रलोभन से आप एकदम से मुक्त हुए, आशाजनक नौकरी आपने छोड़ दी, नाटक अभिनय का काम भी छोड़ा, जिस कार्य में सभी आपकी प्रशंसा कर रहे थे, और दूसरे-दूसरे सुख-भोग के कार्यों से भी आपने मुँह मोड़ लिया। इस प्रकार मुक्त हो आप केवल धर्मप्रचार व्रत में रत हुए और अपने को परमेश्वर के मङ्गलमय चरण में समर्पित किया। आपके सहचरों ने भी आपका दृष्टान्त देख अपना सर्वस्व त्याग एक अन्तःकरण से आपका साथ दिया। सृष्टिकाल से करुणामय परमेश्वर इसी प्रकार पृथ्वी और देश के उद्धार के लिये अपने भक्तों को यहाँ भेजा करते हैं और इनके जीवन द्वारा सांसारिक सुखभोग की असारता और अपनी महिमा का प्रचार कर संसार का उद्धार करते हैं।

धर्म-प्रचार

भक्तों का जीवन और भक्ति एक है। भक्ति क्या है, भक्ति किसे कहते हैं इत्यादि भक्ति-सम्बन्धी प्रश्नों की मीमांसा केवल भक्तों के जीवन द्वारा हो जाती है। भक्तों का जीवन देखने ही से भक्ति का संचार हो जाता है, मानो उनके जीवन से भक्ति की आभा निकलकर चारों ओर भक्ति फैलती रहती है। इसी प्रकार केशवचन्द्रसेन के जीवन से भक्ति की किरणें चारो ओर फैलने लगीं। जो आपके सहवास में आये वे भक्ति में आबद्ध हो भगवान् के नाम का देश-विदेश में प्रचार करने लगे। केशव का जीवन और धर्म-प्रचार एक ही है। इस समय से केशव बराबर अग्निमय उत्साह और उद्यम के साथ चारों ओर ब्रह्मनाम का प्रचार करने में लीन रहे। इस उद्देश्य साधन करने के लिये आपने क्या नहीं किया था, आपकी पूजा, उपासना, प्रार्थना, उपदेश, आलोचना, कथोपकथन, वक्तृता, बन्धु बान्धव समाज के साथ सम्बन्ध, रहन-सहन सभी के अन्तर से ब्रह्मवाणी का एक अलौकिक सुर निकलकर सबको भगवान् के चरण में ले चला था। आपके इस क्षेत्र में यह उद्योग लिखकर शेष नहीं किया जा सकता है। आपके सत्कार्य और अमृतमय वचन एक-से-एक हैं जिन सबके भीतर मङ्गलमय परमेश्वर की गूढ़ लीलाओं और तत्त्वों का भाण्डार छिपा हुआ है। आपके बहुत-से सारगर्भित उपदेश और कथोपकथन नहीं लिखे गये थे, परन्तु जो कुछ लिखे गये हैं उन सबके एकत्र संग्रह करने से बहुत-से

ग्रन्थ बन सकते हैं और उनकी संख्या बड़ी होगी। इतने ग्रन्थ कभी भी आपके पहले धर्म-प्रवर्त्तकों ने नहीं लिखे गये थे।

जीवन को धर्म-भित्ति पर स्थापित कर प्रत्येक नरनारी को इस पृथ्वी पर अपना-अपना कार्य करना होगा, इसी में मानव-समाज, देश और सारे जगत् का कल्याण है, इसे केशव ने अपने जीवन के आरम्भकाल ही में भली भाँति समझा था। जीवन में धर्मभाव का अभाव केवल व्यक्तिविशेष को कलुषित करता है, इतना ही नहीं, बल्कि इस अभाव से पृथ्वी के सम्पूर्ण लोगों की सामाजिक, पारिवारिक, बौद्धिक और नैतिक उन्नति में भयङ्कर बाधा उपस्थित होती है। मानव-जीवन में इसी धर्म-भाव को सर्वदा जीवित रखने के लिये केशव ने आजन्म चेष्टा की थी। आप सबसे कहते थे—"भ्रातः! अग्रसर हो, दाहिनी-बाईं किसी ओर न देखकर दृढ़ता के साथ अग्रसर हो। बहुत-सी परीक्षाएँ एवं प्रलोभन तुमको भुलाने की चेष्टा करेंगे, परन्तु तुम ईश्वर की इच्छा के ऊपर आत्म-विसर्जन कर उद्यम और साहस के साथ चलते रहना। जो हमलोगों के आलोक, शक्ति, पिता और बन्धु हैं उनकी ओर स्थिर भाव से भिखारी की नाईं सर्वदा दृष्टि रखना। वे तुम्हारे मन को मुक्तिप्रदज्ञान से, हृदय को सुमधुर प्रेम से, आत्मा को पवित्रता से और हाथ को शक्ति तथा साहस से पूर्ण कर देंगे।" केशव इस प्रकार ब्रह्म वाणी सबके लिये सुलभ करने के लिये वक्तृता और कथोपकथन करने लगे। महाविद्यालय में आपकी वक्तृता सुन और आपकी पुस्तिकाएँ पढ़ लोगों के अन्तर में ब्रह्म भाव का उदय होने लगा। आपका नाम अब कलकत्ते के बाहर भी चारों ओर फैलने लगा।

सहायता से देश में हितकर कार्यों के लिये नई-नई संस्थाएँ ब्राह्म-समाज में स्थापित होने लगीं।

१८५९ ई० के सितम्बर महीने में महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर सिंहल द्वीप भ्रमण करने गये थे। केशव ने भी आपके साथ जाने का निश्चय किया था। उस समय जहाज से कहीं जाना हिन्दुओं के लिये मना था। ऐसा काम म्लेच्छ का काम समझा जाता था। केशव की माता सर्वदा डरती रहती थी कि जिसमें आपके कारण समाज से च्युत तथा जाति-भ्रष्ट होकर न रहना पड़े। इस उपयुक्त अवसर पर केशव ने बिना किसी को कहे सुने सिंहल की यात्रा की थी। आपने एक पत्र लिख दिया था। जहाज छूटने के बाद यह पत्र आपके परिवार के लोगों को मिला था। परिवार में विशेषकर आपकी माता और पत्नी के लिये यह एक बहुत दुःख और शोक की घटना हुई थी। सभी आपके सम्बन्ध में नाना प्रकार की बातें कहने लगे। इस यात्रा से केशव और महर्षि देवेन्द्रनाथ में घनिष्ठता बहुत बढ़ गई। केशव का साहस और भरोसा दूना हो गया। इतना ही नहीं, इस यात्रा से जाति-भेद और कुसंस्कार के ऊपर विशेष आघात पहुँचा था और इससे देश का कल्याण साधन हुआ था।

केशव ने कई सत्साहसी सत्यप्रतिज्ञ युवकों का एक दल संस्थापित किया। कलुटोला के घर के एक छोटी कोठरी में आप युवकों के साथ धर्मालोचना, चरित्रोन्नति और समाज-संस्कार के विषय में आलोचना करते थे। महर्षि देवेन्द्रनाथ ने इसका नाम 'सङ्गत सभा' रख दिया था। इस सङ्गत सभा के सम्मुख केशव ने अति कठिन और गूढ़ कार्य उपस्थित किया था।

धर्म-संस्कार और समाज संस्कार इस सभा के मुख्य उद्देश्य थे। हिन्दू-समाज में कहाँ पर अन्धकार है, किस प्रकार आलोक-रश्मि द्वारा उसे दूर करना होगा। इसी के लिये सङ्गत सभा प्रस्तुत होने लगी। केशव इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये अक्लान्त भाव से चेष्टा करने लगे। यहाँ तक कि किसी-किसी दिन सत्-प्रसङ्ग में सारी रात बीत जाती थी।

उपवीत (जनेउ) त्याग करना, स्त्री शिक्षा का प्रचार, पौत्तलिकता का लोप, नैतिक सदाचार का अवलम्बन इत्यादि शुभ लक्षण जो आज अति सहज मालूम होते हैं, इसी सङ्गत सभा के प्रभाव से हैं। इसी सङ्गत सभा की बदौलत थोड़े ही समय में ब्राह्म-समाज में एक प्रचारकदल स्थापित हुआ और इसी उन्नतिशील ब्राह्मसमाज के प्रचारकदल द्वारा भारतवर्ष में एक नूतन युग का आविर्भाव हुआ जिसका फल वर्तमान भारत भोग कर रहा है। इसी दल के तेजस्वी, उत्साही और वीर प्रचारक भारत में ब्रह्म-नाम की ध्वनि चारों ओर फैलाने लगे। देश में प्रेम, भक्ति और सद्भाव की ज्योति चारों ओर फैलने लगी। इस सङ्गत सभा के युवक सभ्य केशव का अनुकरण कर अपनी भौतिक काम छोड़ अपने को भगवान् के कार्यों के लिये उपयुक्त बनाने लगे। जिन्हें मत्स-मांस खाने, चुरुट, तम्बाकू पीने का कुअभ्यास था उन्होंने इन दोषों से मुक्त कर अपने को निर्मल और पवित्र बनाया और नाना सद्गुणों से अपने को सुसम्पन्न करने लगे। जो सत्य है—उसे जीवन-द्वारा दिखाना होगा, यही सबकी प्रतिज्ञा थी। सबकी दृष्टि अपनी ओर रहती थी। अन्तर में पाप का अन्वेषण करना, उसका स्वीकार करना, उसे छोड़ना, प्रार्थना

करना, अपने दोष की आलोचना करना, जीवन किस ओर जा रहा है इसका पर्यवेक्षण करना इत्यादि इनके मुख्य उद्देश्य थे। इस प्रकार इसी सभा के द्वारा अनेकों का परित्राण हुआ था। इसी सभा के कारण ब्राह्मसमाज में वीरता, साहस और कार्यपटुता का सञ्चार हुआ था और भारत में ब्राह्मधर्म का प्रचार कार्य आरम्भ हुआ था। धर्म मत और जीवन की गति एक करना सब का एकमात्र लक्ष्य था। इसी सभा से केशव ने "ब्राह्म-धर्म का अनुष्ठान" नामक एक ग्रन्थ का प्रचार किया। इसी समय महर्षि देवेन्द्रनाथ ने अपना उपवीत (जनेउ) परित्याग किया था। इसी समय ब्राह्मधर्म ने भी अपना यथार्थ आकार धारण किया। इसके पहले ब्राह्मसमाज का धर्म मत और जीवन एक नहीं था। सभा-समाज मे धर्म मत का प्रचार और समर्थन उसी प्रकार था जिस प्रकार आजकल कहीं-कहीं विशेषकर बिहार प्रदेश मे आर्यसमाज की अवस्था है। धर्म और समाज के मतानुसार सामाजिक जीवन में सामञ्जस्य नहीं देख पड़ता है। उस काल के ब्राह्मसमाज की अवस्था ठीक उसी प्रकार की थी। जाति-भेद, पारिवारिक अनुष्ठान, विवाह-प्रथा इत्यादि ब्राह्म-समाज में ठीक हिन्दू मत के अनुसार होते थे। इसी लिये हिन्दू-समाज की ओर से उतनी बाधा नहीं पहुँची थी। केशव जीवन को यथार्थ ब्राह्मधर्म के अनुसार बनाने लगे और चारों ओर आपका प्रभाव तथा प्रताप देख पड़ने लगा कि कोई उपवीत छोड़ रहे हैं, कोई जातिभेद नहीं मान विवाह-कार्य सम्पादित कर रहे हैं, स्त्रियाँ स्वाधीनता के साथ ब्राह्मसमाज मे पूजा-आराधना में योगदान दे रही हैं, शिक्षा उपार्जन कर रही

हैं, इत्यादि। यह देखकर हिन्दू-समाज में तहलका मच गया लोगों ने देखा कि जाति, कुल और मान की रक्षा कठिन थी बहुतों ने सोचा था कि ईसाईसमाज में न जाकर ब्राह्मसमाज का आश्रय लेने से जाति और कुल का मान बचा रहेगा। उनकी यह आशा जाती रही। इस समय क्रिश्चियन धर्म-प्रचारकों ने समझा कि ब्राह्मसमाज उन्हें सहायता कर रहा था और आशा की थी कि ब्राह्मसमाज अन्त में ईसाईसमाज के साथ मिल जायगा, पर उनकी भी आशा जाती रही।

इसी सङ्गत सभा में बहुत-से गूढ़ और कठिन प्रश्नों की समालोचना होती थी। केशव की चेष्टा केवल समाज-संस्कार की ओर ही नहीं थी, आपने अपने चरित्र और जीवन द्वारा यथार्थ धर्म साधन, आध्यात्मिक उन्नति और नैतिक चरित्रगठन का मार्ग सुलभ एवं सहज कर दिया था। सात्विक आहार, पान, परिच्छद, प्रार्थना, दैनिक उपासना, धर्म-प्रचार, वक्तृता, देश और अपनी उन्नति सभी विषयों में केशव का दृष्टान्त लोगों के लिये अनुकरणीय हो गया था। केशव जो काम करते थे आपके सहयात्री बन्धुवर्ग भी उसे आदर्श समझकर अपना जीवन उसी साँचे में ढालने लगे। कलकत्ते के ब्राह्मसमाज में सङ्गत सभा के सभ्यों का एक विशेष आधिपत्य फैल गया। इसे देख दूसरी-दूसरी जगहों के ब्राह्मसमाजों में भी ऐसी सभाएँ स्थापित हुई थीं। इस प्रकार धर्मपिपासु, साहसी और आत्म-त्यागी ब्राह्मबन्धुओं को देख महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर अत्यन्त प्रसन्न और आशान्वित हुए।

केशव और आपके दल के उत्साही ब्राह्मों की सहायता से

ब्राह्मधर्म की प्रखर किरणें चारों ओर फैलने लगीं। जो लोग पहले पहल ब्राह्मधर्म और केशव का यथार्थ भाव नहीं समझने के कारण प्रति विरोध और विपक्ष भाव प्रदर्शित करते थे, वे भी पीछे केशव की सुयुक्ति द्वारा असल सत्य का मर्म समझकर आपके साथ सद्भाव और बन्धुता का परिचय देते थे। व्यक्तिगत सम्भ्रम मान-मर्यादा बचाकर, सद्गुणों के प्रति श्रद्धा दिखलाते हुए, भ्रान्ति, दुर्नीति एवं, यथार्थ कार्य का प्रतिवाद किस प्रकार करना होता है, उसे केशव भली भाँति जानते थे। इसी कारण आपने, पहले अपने कार्य में नाना प्रकार के बाधा-विघ्नों को पाते हुए भी, अन्त में अपने सभी कार्यों में सफलता और चारों ओर से सहानुभूति पाई थी और देश के लोगों को सुरुचि तथा धर्मानुराग सिखाया था। जिन लोगों ने आपके जीवनकाल में आपके प्रति विरोध-भाव बना रक्खा था उनलोगों ने भी पीछे आपको समझा है और आपके प्रति श्रद्धा तथा भक्ति दिखाई है।

महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर के साथ केशव का योग दिन दिन घनिष्ठ होता गया। इसे देख कलुटोला के सेन-परिवार में केशव का अत्यन्त अपवाद और निन्दा होने लगी। परिवार के लोग आपको उत्पीड़ित करने लगे, पर महर्षि आपका असाधारण धर्मानुराग और कार्यपटुता देख आपको अपने पुत्र से भी अधिक प्यार और आदर करने लगे। १८६२ ई० की १३ वीं अप्रैल को केशवचन्द्र कलकत्ते के समाज के आचार्य बनाये गये। इसी उपलक्ष्य में महर्षि ने आपको 'ब्रह्मानन्द' की उपाधि दी थी। इस अवसर पर महर्षि ने अपने घर में एक भारी उत्सव किया था। घर के बाहर का आँगन अति सुन्दर रूप से

पुष्प, पत्र, दीपमाला द्वारा सुसज्जित किया गया था और भोजनादि की सुन्दर व्यवस्था की गई थी। इस उत्सव और विधि में भगवान् के विधान का अनुभव कर केशव और ब्राह्म बन्धुगण अत्यन्त कृतज्ञ और प्रसन्न थे। आपके बन्धुगण और आपने स्वयम् भी अपनी धर्मपत्नी को इस अवसर पर उपासना में ले जाने के लिये स्थिर किया था। केशव की स्त्री उस समय अपने पिता के भवन में थीं। केशव इनको अपनी ससुराल से घर ले आये थे। उपासना के दिन प्रात.काल केशव अपनी धर्मपत्नी के साथ महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर के घर पर जाने के लिये उद्योग करने लगे। यह देख आपके परिवार के लोग क्रोध से अन्धे हो गये और नाना प्रकार की वाधाएँ उपस्थित करने लगे। टोले-महल्ले के सभी लोग इकट्ठे हुए और यहाँ तक कि दास-दासियाँ भी आपपर नाना प्रकार की फब्तियाँ कसने लगे। केशव ने अपनी माता को इसके पहले दिन (रात में) कहा था कि कल स्त्री के साथ समाज जाना है। माता अपने पुत्र के प्रति प्रगाढ़ स्नेहवश इसमें बाधा नहीं डाल सकीं। वे केशव का स्वभाव भली भाँति जानती थीं इस कारण सहज ही अनुमति दे दी थी; पर इधर सभी लोग आपके विपक्ष में थे। घर के मालिक हरिमोहन सेन ने घर के बाहर दरवाजे में ताला डलवा दिया था। चारों ओर से बाधा-विघ्नों के भीतर धर्मवीर दृढप्रतिज्ञ केशव ने इस अवसर भी अपनी कोमलता और विनम्रता के भीतर धर्म-रक्षा के लिये अलौकिक साहस और तेज का परिचय दिया था। आपने अपनी धर्मपत्नी से कहा—"चाहे मेरे साथ आगे बढ़ो, नहीं तो इसी समय परिवार

के गुरुजनों के साथ पीछे आओ !" यह कहकर केशव अति वीरता के साथ दरवाजे की ओर आगे बढ़े और आपके पीछे आपकी धर्मपत्नी भी चलीं। दरवाजे के निकट पहुँचने पर दरबान को दरवाजा खोलने के लिये जोर से हुक्म किया। इस वीरता के आगे सभी प्रकार के बाधा-विघ्न विलीन हो गये। दरबान ने आपके हुक्म से दरवाजा तुरत खोल दिया। सब देखने-वाले स्तब्ध हो गये। केशव ने एक पालकी भाड़े पर ली और स्त्री को उसपर चढ़ाकर स्वयं पैदल महर्षि देवेन्द्रनाथ के घर की ओर चले। इसी घटना से हिन्दू परिवार की स्त्रियों की स्वाधीनता का पथ खुल गया। नारियों को घर की चहारदीवारी के अन्दर बन्द रखने की एक अनिष्टकर कुप्रथा को भी केशव ने अपने इस प्रकार के वीरोचित साहस से उठा दिया था। यहाँ पर भी आपकी अत्यन्त धर्मप्रियता का परिचय देख पड़ता है। धर्म के आदेश से आहूत हो महाजन जिस सत्य कार्य करने में अग्रसर होते हैं, दयामय परमेश्वर उनको स्वयं सहायता कर उनकी चेष्टा सफल करते हैं। धर्म की जीत सदा सभी जगह हुई है। केशव के अमोघ धर्मबल के प्रभाव ही से आज भारतवर्ष में नारियाँ इस प्रकार स्वच्छन्दता और स्वाधीनता के वातावरण में अपना जीवन-कार्य सम्पादित कर रही हैं।

केशव को यह पहले ही से प्रतीत हुआ था कि अकेला धर्म जीवन अधूरा जीवन है, इसलिये बहुत उत्साह और आग्रह के साथ आप अपने बन्धुओं के साथ धर्म-विषय में आलोचना, कथा-वार्त्ता किया करते थे। अकेले धर्माचरण कर आप कभी निश्चिन्त और सुखी नहीं रहते थे। सर्वदा आपकी यही चेष्टा रहती थी

कि किस प्रकार देश और समाज के सभी लोग अपने आत्मीय जनों के साथ धर्मजीवन बितावें। इस विशेष अवसर पर जब कि आप समाज के आचार्य हो अपने को समाज कार्य के लिये उत्सर्ग करने को प्रस्तुत हुए थे, आपने समझा था कि इस समय धर्मपत्नी के साथ इस अनुष्ठान में योगदान करने से आपका धर्म जीवन सम्पूर्ण रूप से विकसित होगा। इसी धर्मजीवन के विकास के लिये आपने अपनी धर्मपत्नी को इस अनुष्ठान में आपका साथ देने के लिये इस प्रकार उद्योग और चेष्टा कर अपनी अभिलाषा पूरी की थी। इसी समय केशव ने 'स्त्री के प्रति उपदेश' नामक एक छोटी पुस्तिका लिखी थी। इस पुस्तक में संक्षिप्त और बोधगम्य भाषा में स्त्रियों के कर्तव्यों का आपने वर्णन किया है।

आपके मतानुसार धर्म विश्वास के द्वारा आत्मा को स्वाधीन करना यथार्थ स्वाधीनता है। समाज की बाहरी स्वाधीनता यथार्थ स्वाधीनता नहीं है। इसी भाव से आपने अपनी स्त्री को इस अवसर पर अपने साथ लिया था।

इस अपराध के लिये केशव फिर अपनी स्त्री के साथ अपने गृह में लौट नहीं सके। आपको निर्वासन-दण्ड भोगना पड़ा था। पहले तो कुछ दिनों तक आप अपनी स्त्री के साथ महर्षि के घर में रहे। महर्षि और आपके परिवार के लोगों ने आपको बहुत आदर तथा यत्न के साथ अपने घर में आश्रय दिया था। इसके बाद केशव कोलुटोला मे अपने घर के निकट ही एक छोटे घर में रहने लगे। इस प्रकार समाजच्युत और जातिभ्रष्ट केशव अपनी स्त्री के साथ अलग रहने लगे। आपके आत्मीय जन

सबने आपको परित्यक्त किया। किसीने आपके साथ किसी प्रकार का संसर्ग नहीं रक्खा, परन्तु आपकी स्नेहमयी माता आपके प्रति कभी उदासीन नहीं हुई थीं। केवल वे ही विपद्काल में किसी की बात न सुनकर अपने मधुर प्रेम से आपके तप्त हृदय को शीतल करती थीं। महर्षि भी आपकी खोज-खबर लेते थे और आपकी सहायता करते थे।

इस प्रकार केशव असहाय और निराश्रय हो अकेले रहने लगे। जिसके अधिकार में आपकी पैतृक सम्पत्ति थी वह तनिक भी आपकी सहायता करने के लिये इच्छुक न था, क्योंकि आपने उसकी बात नहीं मानी थी और परिवार के धर्म और आचार के विरुद्ध कार्य किया था। इस प्रकार की कष्टजनक अवस्था में आपको एक अति कठिन घाव हुआ था। इस रोग की यन्त्रणा से केशव प्रायः मरने-मरने पर थे, पर भगवान् की कृपा से नौ दस बार अस्त्र चिकित्सा के बाद अति कष्ट से आप स्वस्थ हुए। अर्थाभाव और इस कठिन रोग ने आपको घोर परीक्षा में डाला था; पर इस समय आपकी सहिष्णुता और धैर्य आपके धर्म-विश्वास का एक अलौकिक प्रमाण है। सम्पूर्ण रूप से इस समय आपने भगवान् के चरणों में अपने आपको समर्पित किया था। क्रमशः आपकी घोर परीक्षा की अग्नि शान्त हुई, आपके विघ्न दूरीभूत हुए, और आपने अपना प्रकृत स्वास्थ्य प्राप्त किया। इसी समय आपके प्रथम पुत्र करुणाचन्द्र का जन्म हुआ था। आपने अपनी पैतृक धन सम्पत्ति पाई, और परिवार के लोग भी आपको अपने घर में ले गये। आपके धर्म-विश्वास की जीत हुई। आपके अभिभावक आपके

निकट परास्त हुए। केशव ने अपने ज्येष्ठ पुत्र का जात-कर्म ब्राह्मधर्म के अनुसार बड़ी धूमधाम से अपने पैतृक घर में ही किया। ब्राह्मसमाज के सभी ब्राह्मों ने इस अनुष्ठान में योग दिया था। उस दिन से आत्मीय जनों ने आप पर किसी प्रकार का भी अत्याचार करना छोड़ दिया।

भारतवर्षीय ब्राह्मसमाज की स्थापना

ब्राह्मसमाज में केशव का जीवन क्रमशः विकसित होने लगा। सभी बाधा-विघ्नों को अतिक्रम कर केशव अपने धर्म जीवन में अग्रसर होने लगे। इसे देख महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर अति सन्तुष्ट और मुग्ध हुए। दोनों महात्मा रात्रि को मिलकर गूढ़ धर्म-चर्चा किया करते थे। महर्षि की यही इच्छा रहती थी कि सारा समय ही केशव के साथ आलोचना में बितावें। एक साथ पान-भोजन, उपासना, धर्म-प्रसङ्ग और धर्म-प्रचार इत्यादि कार्य दिन-दिन बढ़ते ही गये। केशव मानो आपकी आँखों की पुतली हो गये थे। आप प्राय. कहा करते थे कि केशव के साथ धर्मालाप कर जैसा आनन्द पाते हैं वैसा आनन्द दूसरे के निकट नहीं पाते। आप दोनों महात्माओं के योग और धर्मालोचना से ब्राह्मसमाज का अनेक उपकार हुआ है। आप दोनों ने अनेक गूढ़ सत्यों का उद्‌घाटन किया है। इस समय तक ब्राह्मसमाज में भी आचार्य का कार्य ब्राह्मण ही करते आ रहे थे। केशव ब्राह्मण नहीं होने पर भी केवल अपने धर्मबल के प्रभाव से पहले पहले इस पद के अधिकारी हुए थे। इसी समय से आचार्य का पद ब्राह्मण को छोड़ दूसरी जातियों के उपयुक्त मनुष्यों को भी प्राप्त होने लगा। महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर उपयुक्त पात्र केशवचन्द्र के ऊपर समाज का आध्यात्मिक और वैषयिक सभी कार्यों का भार अति आनन्द के साथ सौंपकर निश्चिन्त हुए।

केशव के ऊपर केवल ब्राह्मसमाज ही का भार नहीं था। किस प्रकार देश का मङ्गल होगा, किस प्रकार देश के लोग ब्रह्म-परायण हो साधु जीवन धारण करेंगे आपको सर्वदा यही चिन्ता बनी रहती थी। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये आपने अपने जीवन का उत्सर्ग कर दिया था। दिन-दिन आपके नाना प्रकार के कर्मों की श्रीवृद्धि होने लगी। दुर्भिक्ष, महामारी इत्यादि विषयों में सहायता, विद्यालय का स्थापन करना, पत्रिका प्रकाशित करना, पुस्तक रचना, धर्म-प्रचार, देश-विदेश के ब्रह्मवादियों के साथ पत्र द्वारा आलोचना, भिन्न स्थानों में वक्तृता प्रदान इत्यादि कार्यों द्वारा केशव अपने महत्व का परिचय देने लगे। इन सब विषयों में आपका उद्यम और क्षमता अति अलौकिक थी। आपके सह कर्मी युवक दल भी इसी प्रकार आपकी शक्ति से प्रेरित हो यथा-साध्य आपकी सहायता उसी उद्यम और क्षमता से करने लगे। थोड़े ही समय में देश-विदेश में आपकी ख्याति और गौरव फैल गया। आपके और आपके सहकारियों के जीवन से ब्राह्मसमाज ने एक प्रकार का नूतन रूप धारण किया।

केशव के उद्योग से "इंडियन मिरर" नामक पत्रिका और "कलकत्ता कौलेज" (Calcutta college) नामक विद्यालय स्थापित हुआ था। इन दोनों संस्थाओं को केशव अपने बन्धुओं की सहायता से अति सुचारु रूप से चलाने लगे। इंडियन मिरर पत्रिका में धर्मनीति, राजनीति, समाजनीति इत्यादि विषयक प्रबन्ध केशव स्वयं लिखकर देश के लोगों को नाना विषयों में हितकर शिक्षा देने लगे। कलकत्ता कौलेज के लिये महर्षि ने बहुत रुपये दिये थे, परन्तु पीछे केशव ही ने इसका

सारा भार लिया था। आपके कोई-कोई बन्धु यहाँ बिना वेतन लिये कार्य करते थे। कौलेज के शिक्षकों ने अपने सुदृष्टान्त द्वारा छात्रों में नीति और धर्म की भित्ति स्थापित की थी। केशव का सर्वदा यही उद्देश्य रहता था कि सुन्दर दृष्टान्त देखकर देश के लोग अपने जीवन को धार्मिक और नीतिपरायण बनावें। कलकत्ता कौलेज छः वर्षों तक इस प्रकार छात्रों को शिक्षा देता रहा। इसके बाद अर्थ के अभाव से वह बन्द हो गया।

इस प्रकार केशव अति आशा और उद्यम के साथ देश के सब विषयों में उन्नति और सुधार के लिये अक्लान्त भाव से परिश्रम करने लगे। केशव के इस प्रकार के उत्साह, अध्यवसाय, कर्मशीलता, स्थिरबुद्धि, गभीर धर्मभाव और कर्त्तव्यनिष्ठा के कारण ब्राह्मसमाज ने अत्यन्त शक्तिशाली आकार धारण किया। इसे देख महर्षि केशव के प्रति देवेन्द्रनाथ की प्रेममात्रा और बढ़ गई। दोनों का प्रेम सम्बन्ध अति घनिष्ट होता गया। दोनों पिता पुत्र के पवित्र प्रेम में बँध गये। इस प्रकार दोनों एक मन प्राण से छः वर्षों तक ब्राह्मसमाज की सेवा करते रहे। केशव की सर्वदा यही आकांक्षा और आशा थी कि ब्राह्मसमाज में यथार्थ रूप से भ्रातृप्रेम का संचार हो, देश के लोगों के दुःख दूर हों और सब कोई एक मन प्राण से एकीभूत हो परमेश्वर की पूजा-आराधना में सम्मिलित हों। इस महान् उद्देश्य की पूर्ति में आपने समाज में कई प्रकार के बाधा-विघ्नों को देखा। आपको भली भाँति प्रतीत हो गई कि जब तक देश में तथा समाज में ये बाधाएँ उपस्थित रहेंगी तबतक उसकी यथार्थ उन्नति और सुधार न होगा। अतएव अभी तक ब्राह्मसमाज में जो सब प्रथाएँ

और रीतियाँ थीं और जिनके कारण समाज अग्रसर नहीं हो सकता था आप उन्हें उठाने का उद्योग करने लगे। विधवा विवाह, सङ्कर विवाह (विभिन्न जातियों में परस्पर विवाह), उपवीत छोड़ना आदि केशव समाज में चलाने लगे और आपके बन्धु युवक-दल भी आपकी सहायता करने लगे। महर्षि ने अपने उपवीत छोड़ा था, पर युवकदल की इन विषयों में द्रुतगति देख वे ही घबराये। केशव ने जब अपना मत इन विषयों में प्रकाशित किया, महर्षि इसे देख आपसे विरक्त हुए और डरे। बस यहीं मतभेद की रेखा देख पड़ी।

इसी समय ब्राह्मसमाज में सङ्कर-विवाह, बाल विधवाविवाह हुआ। आजकल यह प्रथा बहुत सहज और साधारण है। किसी पर ऐसी प्रथा से किसी प्रकार का विशेष विकार नहीं मालूम होता है। ब्राह्मसमाज की बात तो दूर रहे, हिन्दू-समाज में भी यह प्रथा अभी अति सहज और साधारण हो गई है; परन्तु उस समय इसे देख लोग विस्मित और चकित हो गये। हिन्दू-समाज की बात तो दूर रहे, प्राचीन ब्राह्मों के मन में अशान्ति और भय हुआ। उनलोगों ने समझा कि केशव और ब्राह्म युवक-दल देश में घोर अनर्थ और अन्याय कर रहे हैं और आपके इस प्रकार के कार्यों में बाधा उपस्थित करने लगे; परन्तु प्रायः ५० वर्षों तक के भीतर ही लोगों को भली भाँति प्रतीत हो गया था कि केशव और ब्राह्म दल ने अनेक बाधा, विघ्न, लाञ्छना, निन्दा, अपवाद, कोलाहल इत्यादि के भीतर किस प्रकार देश और समाज की भलाई की बुनियाद डाली थी जिस दृढ़ भित्ति पर वर्तमान भारत खड़ा होकर मङ्गल वितरित कर रहा है—

इस प्रकार पुराने ब्राह्मगण केशव के विरुद्ध महर्षि के निकट अभियोग लाने लगे। इनमें कईयों ने उपवीत नहीं छोड़ा था और इनलोगों ने कहा कि उपवीतधारी ब्राह्मगण क्यों न आचार्य का कार्य करेंगे। महर्षि ने उपवीतधारी ब्राह्मण ब्राह्मों को भी वेदी पर बैठ आचार्य का कार्य करने की अनुमति दी। इस कारण केशव और महर्षि में मतभेद हो ब्राह्मसमाज में दो दल उपस्थित हुए। एक महर्षि के दलभुक्त ब्राह्मगण और दूसरा केशव का दल। १८६५ ई० में यह घटना उपस्थित हुई। इसी समय से ब्राह्मसमाज ने एक नूतन आकार धारण किया। केशव ने अनुभव किया कि ईश्वर ने आपके ऊपर सार्वभौम धर्म और विशुद्ध धर्म समाज को स्थापित करने के लिये भार दिया है। आप प्रायः छः वर्षों तक महर्षि के साथ नाना प्रकार के सत्कार्यों को कर देश और समाज की उन्नति-साधन में अग्रसर हो रहे थे और यथासाध्य अपना कर्त्तव्य पालन कर थे। जब आपने देखा कि पुरातन ब्राह्मदल आपके विरोधी और आपके कार्यों में बाधा उपस्थित करनेवाले बन गये हैं तब आपने इसी समय ११ वीं नवम्बर, १८६६ ई० में "भारतवर्षीय ब्राह्मसमाज" की स्थापना की। केशव ने यहाँ पर अपने असीम साहस और धर्मभाव का परिचय दिया है। इसके पहले आप अपनी वक्तृता, उपदेश और नाना प्रकार के सत्कार्य द्वारा परिचित हो रहे थे। जब आपने पाप, कुसंस्कार, जाति-भेद, पौत्तलिकता, सम्प्रदायिकता इत्यादि सङ्कीर्ण भावों को दूर करने के लिये सङ्कल्प किया तब दोनों—हिन्दू-समाज और पुरातन ब्राह्मसमाज के—लोग आपके विरुद्ध खड़े हुए। आपके निकट वही समस्या उपस्थित

हुई जो राममोहन राय और महर्षि देवेन्द्रनाथ के निकट उपस्थित हुई थी, परन्तु केशव ने धीरता और गम्भीरता के साथ इसका सामना किया। इसी समय आपके यथार्थ महत्त्व का परिचय हमलोग पाते हैं। यदि जनहितैषी और देशहितैषी पुरुष प्रचलित नियम, विधि के सुधार में इस प्रकार धीरता और साहस के साथ अपने कार्य में अग्रसर न होते तो पृथ्वी आज जहाँ की तहाँ पड़ी रहती। परमेश्वर इस प्रकार महान् वीर पुरुषों को जगत् में भेजकर उनके द्वारा उसका परित्राण कर रहे हैं। केशव इस प्रकार अपने महाव्रत के पालन में मङ्गलमय परमेश्वर पर पूरा विश्वास कर अपने कई युवक सहचरों के साथ खड़े हुए। इसमें पार्श्विक सहायता के ऊपर आपने तनिक भी भरोसा नहीं किया, पर आपने अपने सम्मुख असीम ऐश्वरिक बल और शक्ति देखी जिसके द्वारा सभी प्रकार की बाधाओं को दूर कर यथार्थ धर्म के प्रचार में आप अग्रसर होने लगे।

इसके पहले ब्राह्मधर्म ग्रहण करने के समय जिस तरह केशव के निकट नाना प्रकार के विघ्न उपस्थित हुए थे, उससे भी अधिक घोर परीक्षा इस समय आपके निकट उपस्थित हुई। सारा हिन्दू-समाज, प्रधान आचार्य महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर के साथ सभी प्राचीन ब्राह्मगण असहाय एवं निःसम्बल केशव के विरुद्ध खड़े हुए थे। इधर केशव को अपने कई अनुगत बन्धुओं को छोड़ और किसी प्रकार का पार्श्विक सहारा न था। आपका अब महर्षि के ब्राह्मसमाज में किसी प्रकार का अधिकार न रहा। अतएव आपने "भारतवर्षीय ब्राह्मसमाज" नामक एक स्वतन्त्र ब्राह्म-मन्दिर की प्रतिष्ठा करने का संकल्प किया। आपका विश्वास

साहस और सबसे अधिक ब्रह्मकृपा बल इस ब्राह्म मन्दिर की भित्ति-स्वरूप उपस्थित हुआ और अन्त में आपने अपने सत्यपरायण, उन्नतिशील, आत्मत्यागी एवं उत्साही धर्मबन्धुओं की सहायता से इस प्रकार एक महान् कार्य के सम्पादन में सफलता प्राप्त की थी। इसी समय से केशव के विरोधी महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर और उनके दल के प्राचीन ब्राह्मसमाज का नाम आदि ब्राह्म-समाज हुआ, महर्षि ने इसका भार अपने हाथ में लिया और केशव ने इससे विदाई ली; परन्तु केशव यथार्थ ब्राह्मसमाज की स्वाधीनता और उन्नति के लिये संग्राम करने लगे। आपने इस अवसर पर इस विषय में कई वक्तृताएँ दीं, और शेष में बहुत-से स्वाधीनप्रकृति सभ्य समाज के लोगों की सहानुभूति आकृष्ट की थी। राजा दिगम्बर मित्र के निकट आपने अपने कार्य में उत्साह प्राप्त किया। केशव असत्य और अधर्म के विरुद्ध सर्वदा अति दृढ़ता के साथ संग्राम करते रहे। विपद्-परीक्षा उपस्थित होने पर धीर और शान्त केशव भगवान् के निकट अपने को समर्पित करते थे और भगवत्‌बल लाभ कर सिंह की नाईं सत्य और धर्म की रक्षा के लिये खड़े हो जाते थे। ऐसी अवस्था में उच्च पर्वत की नाईं सभी बाधा-विघ्न-लीन हो जाते थे और केशव अपने सत्कार्य में विजय प्राप्त करते थे।

केशव और उनके सहकारी बन्धुओं ने एक सभा सङ्गठित की और इसके साथ-साथ एक प्रचार कार्य विभाग भी स्थापित हुआ। इस सभा ने साधारण के लिये साधारण अभिप्राय से अपना कार्य आरम्भ किया। 'भारतवर्षीय ब्राह्मसमाज' की स्थापना हुई और इसी समय नवविधान ब्राह्मधर्म के बीज का

वपन हुआ। केशव और आपके बन्धुवर्ग परमेश्वर के ऊपर भरोसा कर नूतन भाव से ब्राह्मधर्म का प्रचार करने लगे।

पहले के प्रचलित ब्राह्मधर्म और 'भारतवर्षीय ब्राह्मसमाज' की स्थापना के बाद नूतन ब्राह्मधर्म में कुछ प्रभेद है। महर्षि देवेन्द्रनाथ के प्रकाशित ('संकलित') ब्राह्मधर्म पुस्तक और केशव चन्द्रसेन के 'श्लोक संग्रह' पुस्तक के पढ़ने से वह भेद स्पष्ट रूप से मालूम हो जाता है। नवविधान प्राचीन ब्राह्मधर्म का ही क्रमविकाश मात्र है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। देश में एक ब्रह्म की पूजा करने की विधि स्थापित करने के लिये राम मोहनराय और उनके बाद महर्षि ने उद्योग और चेष्टा की थी। उन्हीं दोनों महापुरुषों की केवल मात्र ब्राह्म की पूजा के बीज बोने के साथ नवविधान का घनिष्ठ योग है। इसी बीज से उत्पन्न फल-फूलों के साथ सुशोभित नवविधान वृक्ष है जिस वृक्ष की सुशीतल छाया में जगत् के सभी लोग परित्राण पा सकते हैं। यहाँ धर्म में विरोध और द्वन्द्व नहीं है। यह नवविधान पृथ्वी के समग्र नरनारी को आह्वान कर रहा है। हिन्दू, ईसाई, इसलाम, सिक्ख, जोराथ्रियन इत्यादि सभी ब्रह्म-प्रतिष्ठित मण्डलियों के ब्रह्मप्रद सार तत्वों के स्वीकार कर नवविधान जगत् में उदारता, पवित्रता, स्वाधीनता, सद्भाव और प्रेम की मिलन-भूमि स्थापित कर रहा है।

सम्राट् अकबर ने जिस प्रकार एक सभा स्थापित की थी जिसमें भिन्न-भिन्न धर्ममतों के शास्त्रों का पाठ और आलोचना होती थी। केशवचन्द्र ने भी उसी प्रकार भारतवर्षीय ब्राह्मसमाज में विश्वास के साथ सब धर्मों के समन्वय के लिये प्राणपण से चेष्टा की कि जिसमें

भिन्न-भिन्न धर्मों में विरोध भाव त्यागकर सबका सार भाग ग्रहण कर एक सन्धि स्थल स्थापित हो। शाक्य, क्राइष्ट, मोजेज, महम्मद, जनक, याज्ञवल्क्य, चैतन्य, नानक, कनफुसस, योरोयेस्टार इत्यादि महात्मा और वेद, उपनिषद्, भागवत, गीता, ललित विस्तर, बाइबेल, कोरान, जेंद—अवस्ता, ग्रन्थ साहब, इत्यादि धर्म पुस्तकों को केशव ने ब्राह्मसमाज में प्रत्येक नरनारी की श्रद्धा और सम्मान की सामग्री स्वरूप प्रतिष्ठित किया था। इस प्रकार की सत्या संसार में एक अलौकिक और नूतन हुई। यहाँ पर किसी से किसी प्रकार का विरोध भाव नहीं है, यहाँ सभी का सद्भाव और प्रेम का मिलन-स्थान है। इसी कारण इसका नाम नव विधान है।

केशवचन्द्र के बाल्यजीवन में ही धर्म के प्रति अनुराग और परमेश्वर में विश्वास और भरोसा का परिचय हमलोग पाते हैं। जैसे-जैसे आप बढ़ते गये यह भाव दिन-दिन आपमें उत्तरोत्तर वृद्ध और विकसित होता गया। साथ ही आपकी इच्छा बलवती होती गई। आपके सम्पूर्ण जीवन, रहन-सहन, आचार-व्यवहार, खान-पान, कथा-वार्ता सभी से आपका यह महान् भाव प्रस्फुटित होने लगा। भारतवर्षीय ब्राह्मसमाज की स्थापना के बाद आपके जीवन का प्रभाव अति विशद रूप से समाज के लोगों पर प्रकाशित होने लगा। आपके सद्गुण और सदनुष्ठान आपके बन्धु-वर्ग में विशिष्ट रूप से देख पड़ने लगे। ब्राह्मधर्म और नवीन ब्राह्मसमाज के जीवन में किसी प्रकार की विभिन्नता नहीं देख पड़ी।

ब्राह्मधर्म का प्रचार

केशवचन्द्र भारतवर्षीय ब्राह्मसमाज प्रतिष्ठित कर परमेश्वर की मङ्गलप्रद वार्ता सभी नरनारियों के निकट पहुँचाने के लिये अत्यन्त उत्साह और व्यग्रता के साथ कार्य करने लगे। आपके विश्वासी बन्धुवर्ग ने भी इस महान् कार्य में बहुत विश्वास और उद्यम के साथ आपकी सहायता की। परमेश्वर का विधान पालन करना, परमेश्वर का नाम गान और प्रचार करना इस विश्वासी दल का एकमात्र लक्ष्य हुआ। मानव-समाज को धर्म-पथ में लाने के लिये एकान्त भाव से अति आग्रह और उत्साह के साथ केशव और ब्राह्मबन्धु दिवारात्रि उद्योग करने लगे। पहले पहल कुछ काल तक कलकत्ते और इसके आसपास की भवानीपुर, चुंचुड़ा, श्रीरामपुर इत्यादि जगहों में आपने प्रचार कार्य आरम्भ किया। इन सब जगहों में अपनी वक्तृताओं द्वारा आपने सबको परमेश्वर की पूजा-आराधना की ओर आकृष्ट किया। आपकी शक्तिशाली और प्रभावशाली बातें सबके अन्तर को तीर की नाईं भेद करती थीं। जहाँ कहीं आप जाते थे, सभी आपको देखने के लिये और आपकी वक्तृता सुनने के लिये अति उत्साह और चाह के साथ दौड़ पड़ते थे।

केशव की वक्तृता यथार्थ में ही सार तत्वों से पूर्ण रहती थी। जैसे आपकी वक्तृता का विषय अति हितकर और हृदय-ग्राही रहता था उसी प्रकार आपकी वक्तृता देने की प्रणाली औ विधि अति अलौकिक और अपूर्व थी। मौखिक वक्तृता देने म

विधि का आरंभ केशव ही के समय से हुआ था। जिस प्रकार परमेश्वर ने आपके अन्तर में 'नवविधान' का एक अपूर्व भाव जाग्रत किया था उसी प्रकार इस अपूर्व धर्म भाव के प्रचार करने की शक्ति भी आपको दी थी। कलकत्ते के विशाल सभा मन्दिर (Town Hall) में जब आप वक्तृता देते थे उस गृह में वंशीध्वनि की नाईं आपकी ध्वनि हजार-हजार लोगों को मुग्ध कर देती थी। जहाँ जब कभी आप कुछ बोलते थे, आपकी वक्तृता के भीतर से नूतन भाव सबके अन्तर को मोहित कर देता था। जो आपके विरोधी थे वे भी आपके वचनों से मुग्ध हो जाते थे। आपके हृदयग्राही प्रभाशाली भाव सब सभी श्रोताओं को उत्तेजित कर देते थे। इस प्रकार चार वर्षों तक कलकत्ते और इसके आसपास के स्थानों में केशव ने अपने सुललित अमृतमय वचनों के द्वारा सबके निकट मङ्गलमय परमेश्वर की वार्ता पहुँचाई।

१८६४ ई० की ९ वीं फरवरी को केशव ने धर्म प्रचार करने के लिये मद्रास और बम्बई की यात्रा की। यहाँ लोगों ने अति उत्साह और आदर के साथ आपका स्वागत किया। इन सब स्थानों में केशव की वक्तृता से लोगों की दृष्टि परमेश्वर की यथार्थ पूजा की ओर पड़ी और इनलोगों ने ब्राह्मसमाज की स्थापना की। बम्बई में आपकी मौलिक वक्तृता सुनकर लोग सब अत्यन्त आश्चर्यित हो गये थे। वहाँ के गवर्नर ने केशव के सद्गुण, बुद्धि और क्षमता का पूरा समादर किया था।

बम्बई का वर्तमान प्रार्थना-समाज केशव ही के प्रचार का है। आज वहाँ सैकड़ों सम्भ्रान्त उच्चपदस्थ

व्यक्ति सम्मिलित हो एक निराकार ब्रह्म की पूजा-आराधना करते हैं। इसके अलावा पूना, सितारा, अहमदाबाद इत्यादि नगरों में भी इस प्रकार एक निराकार परब्रह्म की उपासना के लिये मन्दिर स्थापित हुए थे। इस प्रकार केशव और आपके उत्साही बन्धुगण नि:स्वार्थ भाव से विशुद्ध अपौत्तलिक धर्म का प्रचार करने लगे। इस प्रकार एक निराकार परब्रह्म की पूजा-उपासना का प्रचार भारतवर्ष में केशव ही ने पहले पहल आरम्भ किया था। बौद्ध संन्यासी और ईसाई समाज के प्रचारकों ने भी इस प्रकार धर्म प्रचार की विधि का अवलम्बन किया था सही, परन्तु हिन्दू-समाज में वास कर इस प्रकार उत्साह और आग्रह के साथ केशव के पहले ब्रह्म नाम की महिमा और एक ब्रह्म की पूजा आराधना के लिये जनसाधारण को इस प्रकार और किसी ने कभी आकृष्ट नहीं किया था।

केशव और आपका दल इस प्रकार देश देशान्तर में ब्राह्म-धर्म का राज्य विस्तार करने लगे। केवल वचन और वक्तृता-ही द्वारा प्रचारकवृन्द ने लोगों को ब्रह्म की ओर आकृष्ट नहीं किया था, बल्कि उनके उज्ज्वल विरागमय एवं निष्कलङ्क जीवन ने भी लोगों के सम्मुख एक आदर्श ब्रह्ममय जीवन स्थापित किया था जिसे देख लोग आपके दलभुक्त होने लगे। इस प्रकार जीवन्त उत्साह और विश्वास के साथ कार्य करके केशव और आपके साथी साधारण लोगों के विश्वासपात्र हो गये और चारों ओर से लोग सम्मान और आदर के साथ आपकी सहायता और सहानुभूति प्रकट करने लगे और चारों ओर आपकी ख्याति फैल गई। परन्तु इधर आदि समाज के पुरातन ब्राह्मगण आपके बाधा-

स्वरूप थे। केशव आदि सुधारक समाज की दुर्बलता को यथार्थ ब्राह्मधर्म के प्रचार में कण्टक देख इसे सुधार के लिये कटिबद्ध थे। पर आपने आदि समाज के प्राचीन ब्राह्मगणों से इस कार्य में सहायता न पाकर बाधा ही पाई थी। जो हो, इस प्रकार मत और कार्य में विभिन्नता रहने पर भी केशव ने महर्षि देवेन्द्रनाथ के प्रति सर्वदा भक्त पुत्र की नाईं भक्ति और श्रद्धा दिखाई थी। परन्तु आदि समाज के साथ केशव का सम्बन्ध टूटने से समाज की अवस्था क्रमश. दुर्बल और शोचनीय होती गई तथा इधर केशव और आपके दल के नाना प्रकार के कार्य क्रमश. विकास के प्राप्त होते गये।

कलकत्ते के टकमालघर की दीवानी का कार्य बहुत दिन से केशव के परिवार के आत्मीय लोग करते आ रहे थे। हरिमोहन सेन के पुत्र यदुनाथ सेन ने जब इस पद को त्याग किया तब केशव ने अपने भाइयों के कहने से कुछ समय के लिये १८६६ ई० में वहाँ की दीवानी का पद मंजूर कर लिया। इसे देख आपके दल के बन्धु लोग डरे और आपसे कुछ विरक्त हुए, परन्तु केशव ने केवल अपने आत्मीयों के अनुरोध से ही इसे कुछ समय के लिये स्वीकार किया था। जिन्होंने अपने को भगवान् के पद में अर्पित किया था उन्हें क्या पृथ्वी का दासत्व कभी भला लगता ?

१८६६ ई० में केशव ने कलकत्ते में कई वक्तृताएँ दीं। इन वक्तृताओं के द्वारा आपकी ख्याति चारों ओर और भी फैल गई। "जीसस क्राइष्ट, यूरोप और एशिया" विषय में वक्तृता से देश में बड़ा हलचल मच गया। ईसाई पादरियों और ईसाई

समाज के लोगों ने समझा कि केशव ईसाई हैं, पर इधर हिन्दू समाज और प्राचीन ब्राह्मगण आपकी निन्दा और उपहास करने लगे। इसी वक्तृता से देश के उच्च श्रेणी के पुरुष और राजकर्मचारियों में केशव अनेक स्नेह प्रेम और श्रद्धा के पात्र हुए। बड़े लाट साहब सर जान लारेन्स आपकी वक्तृता पढ़कर अति सन्तुष्ट हुए और शिमला से कलकत्ते आने पर आपके साथ अति आग्रह के साथ भेंट की। उसी समय मिस कार्पेण्टर के साथ आपका परिचय हुआ था। ब्राह्मयुवक यीशस क्रायष्ट चरितामृत पान करने लगे। इन सबकी दृष्टि यीशस की ओर पड़ी। बाइबल पाठ कर इस शास्त्र से छिपे रत्नों से अपने को भूषित करने लगे। यीशस के प्रति इनकी श्रद्धा और भक्ति बढ़ी। क्रिस्टमस (क्रायस्ट के जन्म-दिन) के उपलक्ष्य में ब्राह्मसमाज में विशेष रीति से उपासना, भजनादि की प्रथा आरम्भ हुई।

१८६६ ई० में इसी साल केशव ने "महापुरुष" (great men) विषय पर एक वक्तृता दी। इस वक्तृता से स्वदेश और विदेश सभी धर्मप्रवर्त्तक महाजनों के प्रति इनकी श्रद्धा प्रकाशित होती है। नवविधान भाव का बीज आपके धर्म जीवन के आरम्भ काल ही से आपके जीवन में अङ्कुरित हो रहा था। इस अङ्कुर के क्रमश विकास के कारण आपका धर्म जीवन भाव स्पष्ट प्रकाशित होने लगा। इस वक्तृता से अनेक लोगों के मन में नाना प्रकार के भाव और कामनाएँ उपस्थित होने लगीं। ब्राह्मसमाज में अनेकों के मन में शंका और सन्देह उपस्थित हुए। ब्राह्मबन्धुओं के मन में डर हुआ कि केशव इन वक्तृताओं के द्वारा ब्राह्मसमाज में अवतारवाद ला

रहे हैं, पर केशव परमात्मा के चरणकमलों में अपना आश्रय स्थापित कर निर्विकार रूप से अपना महान् कार्य करते गये। उस समय लोगों को यह तनिक भी नहीं मालूम हुआ कि केशव के अन्तर में नवविधान प्रस्फुटित हो रहा था और केशव ब्राह्मसमाज को प्राचीन ज्ञान रत्न और आधुनिक विज्ञान, सब महाजनों और साधुओं में सामञ्जस्य भाव से सुशोभित कर रहे थे। इस समय से ब्राह्मसमाज में गौतम बुद्ध, योशास क्रायस्ट, महम्मद, चैतन्य इत्यादि महात्माओं के प्रति भक्ति और श्रद्धा का सञ्चार होने लगा।

इसके बाद केशव ढाका, फरीदपुर, मैमनसिंह इत्यादि स्थानों में ब्राह्मधर्म प्रचार करने के लिये गये। इन सब जगहों में आपके प्रचार से एक भारी आन्दोलन हुआ था। हिन्दू-समाज के कई प्रधान प्रधान लोगों ने 'हिन्दू धर्मरक्षणी' एक सभा स्थापित की और संवादपत्र में केशव और आपके दल की निन्दा करने लगे। जिस प्रकार राजा राधाकान्तदेव ने राममोहन के विरुद्ध सभा स्थापित की थी, बङ्ग देश के हिन्दुओं ने भी उसी प्रकार केशव की प्रबल प्रतिभा देख आपके विरुद्ध अनेक स्थानों में सभाएँ स्थापित की थीं। ब्राह्मसमाज के बाधा स्वरूप हिन्दू-समाज फिर दूसरी बार खड़ा हुआ, पर ब्राह्मसमाज के विरोधी होने पर भी हिन्दू-समाज अज्ञात कारणवश ब्राह्मसमाज की रीति-नीति प्रथा इत्यादि व्यवस्थाओं का अवलम्बन करने लगे। वर्तमान युग में भी हमलोग देखते हैं कि जिन सब कार्यों के प्रचार में महर्षि, राममोहन, केशव इत्यादि ब्राह्मसमाज के प्रचारकों को अत्यन्त कठिनाई, विपत्ति, बाधा-विघ्नों का सामना करना पड़ा था, आज

वे सब कार्य हिन्दू-समाज में अति साधारण, स्वाभाविक और और सहज भाव से प्रविष्ट हो रहे हैं। जिस समय केशव ढाका में प्रचार कर रहे थे, आपको और आपके साथी बन्धुवर्ग को जो कठिनता सहनी पड़ी थी उसकी धारणा नहीं की जा सकती है। इस समय आपको यहाँ वास, आहार इत्यादि का किसी प्रकार बन्दोबस्त नहीं था। नौकर रसोइया नहीं मिलने के कारण वैष्णव लोगों के वासस्थान से खराब भोजन मँगवाकर आप अपना जीवन निर्वाह करते थे। इस प्रकार वासस्थान, भोजन इत्यादि में कष्ट झेलते हुए भी और इस कारण रोगग्रस्त होने पर भी केशव ने अपना कार्य अत्यन्त उत्साह और उद्यम के साथ करते गये। अन्त में हिन्दू-समाज के लोग आपकी वक्तृता द्वारा मुग्ध हुए, और आपकी प्रशंसा और आदर करने लगे, पर तो भी आपके वासस्थान और आहार के लिये किसी प्रकार की अच्छी व्यवस्था नहीं हुई थी। हिन्दू-समाज से च्युत होने के कारण उस समय के हिन्दू आपके साथ खान, पान, सहवास पाप समझते थे। अतएव इस विषय में वे आपसे दूर रहे। यहाँ के उन्नतशील युवकदल ने केशव की वक्तृता और कथावार्ता से पूरा लाभ उठाया था। युवकों का धर्मोत्साह और अनुराग देख केशव और आपके बन्धुगण सभी प्रकार के कष्ट एवं असुविधाओं को भूल गये थे। केशव ने "प्रकृत विश्वास" (True faith) नामक अति उपयोगी पुस्तिका इसी समय लिखी थी। केशव ने इस प्रकार पूर्व बङ्गाल में सत्य धर्म ब्रह्मनाम की महिमा का प्रचार किया था।

इस समय बिहार, युक्त प्रदेश, पंजाब, सिन्ध प्रदेश के कई

शहरों में वहाँ के बङ्गाली भाइयों ने ब्राह्मसमाज स्थापित किया था। केशव बङ्गाल में अपना कार्य सम्पादित कर १८६७ ई० में इस ओर आये। इन जगहों में केशव के आगमन से स्थापित ब्राह्मसमाज की श्रीवृद्धि हुई। आज-कल जिस प्रकार जाने आने के लिये रेलवे की भरमार है उस समय इस प्रकार लोगों को आराम और सुविधा के साथ एक जगह से दूसरी जगह जाने का उपाय नहीं था। कच्चे रास्ते से नदी-नालों को पैदल पार होकर ही लोग आया जाया करते थे। रास्ते में खान, पान और आराम की भी किसी प्रकार सुव्यवस्था नहीं थी। केशव और आपके दल इस प्रकार कष्ट और असुविधाओं को झेलते हुए इन सब प्रदेशों में ब्रह्मनाम का प्रचार करते हुए एक जगह से दूसरी जगह गये और लोगों को अपनी धर्म-स्पृहा और प्रबल उत्साह तथा उद्यम से सत्य धर्म की ओर आकृष्ट किया।

लाहौर में केशव की अङ्गरेजी में वक्तृता सुनकर वहाँ के शिक्षित सज्जन लोग आपके प्रति आकृष्ट हुए। पञ्जाब के लाट साहब ने केशव को अपने भवन में नेवता कर आपके लिये निरामिष भोजन का बन्दोबस्त किया था। आपके प्रति लाट साहब का इस प्रकार सम्मान देखकर पञ्जाब के लोग आपको और भी श्रद्धा और सम्मान के साथ देखने लगे। केशव धर्म प्रचार के लिये जहाँ जहाँ जाते थे वहाँ के बड़े-बड़े शिक्षित सज्जन, राजपुरुष, महाजन इत्यादि आपका आदर और सम्मान करते थे। आपकी अङ्गरेजी वक्तृता से सभी लोग चकित और मुग्ध हो जाते थे। इस प्रकार की अङ्गरेजी वक्तृता उस समय के लोगों के लिये एक अति असाधारण और आश्चर्य की बात थी।

पञ्जाब प्रदेश से केशव कलकत्ते लौट आये। इस वर्ष आप ने आदि समाज के साथ माघोत्सव करने की व्यवस्था की। इस उत्सव में केशव के दल के ब्राह्मिकाओं ने भी योग दिया था। अभी तक केशव के चरित्र में विवेक, वैराग्य, नीति, कर्त्तव्य-परायणता और ज्ञान की प्रधानता थी, पर इस समय से इन गुणों के साथ-साथ आप के धर्म-भाव में प्रेम और भक्ति का भी सञ्चार होने लगा। कठोर वैराग्य के भीतर से केशव प्रेम और भक्ति राज्य में प्रवेश करने लगे। थोड़े ही समय में अपनी सुमधुर और सुन्दर बङ्गला भाषा द्वारा लोगों के हृदय को प्रेम और भक्ति के पुष्पों की ओर आकृष्ट कर ब्राह्मसमाज में आपने प्रेम और भक्ति का एक सुन्दर उदाहरण उपस्थित किया। इस ब्राह्मसमाज को लोग जानते थे कि यहाँ कठोर ज्ञान का शुष्क धर्म है, और यहाँ लोग साधन भजन विहीन अपनी इच्छा अनुसार जो चाहे—कर सकते हैं जो चाहें—खा सकते हैं। इस प्रकार का अपवाद बारे आम लगाया जाता था। केशवचन्द्र ने अपने जीवन द्वारा इस अपवाद का खण्डन किया था। निराकार ब्रह्म की पूजा में भक्ति का स्थान नहीं है। इस बात का खण्डन आपने प्रेम भक्ति प्रचार कर सम्पूर्ण रूप से किया है। केशव के हृदय में यदि प्रेम और भक्ति का सञ्चार नहीं होता तो अब तक ब्राह्मसमाज शुष्क-कठोर मरुभूमि की नाईं हो जाता। परमात्मा ने केशव के अन्तर में प्रेम और भक्ति की नदी प्रवाहित कर ब्राह्मधर्म को प्रेम और भक्ति से द्रवीभूत और सरस किया है। ब्राह्मधर्म प्रेम का अर्घ्य लेकर सभी नरनारियों को आप्लावित कर रहा है। यहाँ किसी प्रकार की विभिन्नता, भेद, विवाद विरोध

मात्र नहीं है। पूर्ण प्रेम से प्रेमिक हो सभी दयामय परमेश्वर के मधुर नाम गान कर अपने को धन्य और कृतार्थ कर सकते हैं।

इस प्रकार प्रेम और भक्ति से अनुप्राणित हो तर्कवितर्क, वादविवाद त्याग केशव अपने दल के साथ अत्यन्त उत्साह और अनुराग के साथ अपने कलुटोला घर में प्रतिदिन भगवान की पूजा-उपासना में लीन हुए। भक्ति की नदी अति वेग के साथ प्रवाहित हुई। केशव और आपके बन्धु अति व्याकुलता के साथ इस शीतल धारा में अपने को छोड़ दिया। भगवान् को सूखे रूखे वैराग्य, तर्क-वितर्क द्वारा नहीं पर उनको साक्षात् रूप से दर्शन कर उनको जीवन के प्रतिपल में उपलब्ध करेंगे, इसी आशा और व्यग्रता से सब व्रती हुए। नित्य नूतन भाव से आपलोग उनके दर्शन पाने लगे और आनन्दमयी जननी की गोद में सुख और आनन्द रस का पान करने लगे। इसी प्रेम और भक्ति के ऊपर भित्ति स्थापित कर आपलोगों की प्रार्थना और उपासना की विधि स्थापित हुई और इसी उपासना विधि के ऊपर वर्तमान ब्राह्मसमाज की प्रचलित शास्त्र-विधि, साधन भजन, प्रार्थना, पूजा, उपासना प्रणाली सङ्गठित है। इसके पहले आराधना में भगवान् के छः स्वरूप संस्कृत श्लोकों में उपासक उच्चारण करते थे। केशव ने इसी समय "सत्यं ज्ञानमनन्तम् ब्रह्म। आनन्दरूपममृतम् यद्विभाति। शान्तम् शिवमद्वैतम्" के अन्त में "शुद्धमपापविद्धम्" स्वरूप योग किया था। आज-कल इस सम्पूर्ण श्लोक की सहायता से उपासक ब्रह्म की आराधना करते हैं। पहले आराधना में इस श्लोक

पाठ के बाद प्रत्येक स्वरूप के साथ किस प्रकार योग है और इसके साथ मानव का क्या सम्बन्ध है, इस विषय में स्पष्ट और परिस्कार रूप से व्याख्यान की व्यवस्था न थी। केशव इन सात स्वरूपों का पूर्ण विवरण कर और उनके साथ मानव-जीवन में सम्बन्ध दिखाकर उपासकों को मङ्गलमय विधाता के साथ सम्पूर्ण रूप से युक्त कर गये हैं।

इसी समय केशव अपने दल के साथ शान्तिपुर गये। यहाँ आपने भक्ति विषय पर बङ्गला में एक वक्तृता दी। आपकी वक्तृता सुन यहाँ के पण्डित, विद्वान्, मानी, ज्ञानी, निरीश्वरवादी इत्यादि सभी लोग आपकी प्रशंसा करने लगे और आपकी गम्भीर चिन्ता और सूक्ष्म आध्यात्मिक भाव से मुग्ध हो गये।

शान्तिपुर से लौट आने पर केशव ने ब्रह्मोत्सव करने की एक नूतन विधि सृष्टि की। इस उत्सव में प्रातःकाल से दस बजे रात तक उपासक सङ्गीत, सङ्कीर्तन, सवेरे, दुपहर, और सान्ध्य उपासना, ध्यान, आलोचना, पाठ, नृत्यगीत में लीन रहते थे। ब्राह्मसमाज में वर्तमान उपासना और ब्रह्मोत्सव की प्रणाली केशवचन्द्र ही के आध्यात्मिक महत्व का परिचय देती है।

इसी वर्ष केशव ने बड़ी धूमधाम से माघोत्सव का आरम्भ किया। १८२८ ई० में बङ्गला सौरमास ११ माघ को राजर्षि राजा राममोहन राय ने अद्वितीय एक परमेश्वर परब्रह्म की उपासना स्थापित की थी। इसी उपलक्ष्य में केशव ने माघोत्सव का आरम्भ किया था। पहले आपने आदि समाज के साथ उत्सव करने का प्रस्ताव किया था, पर यह प्रस्ताव सफल नहीं हुआ।

अतएव केशव ने स्वतन्त्र भाव से अपने दल के साथ उत्सव किया। कलकत्ते में इस प्रकार पहले पहल ब्रह्म का उत्सव एक नूतन दृश्य हुआ था। जिस समय इस उत्सव के उपलक्ष्य में नगर सङ्कीर्तन निकला था, उसमें हजारों लोगों ने अपनी पद-मर्यादा भूल कर दलबद्ध हो शहर के पथ में ब्रह्म नाम सङ्कीर्तन में योग दिया था। इस प्रकार का दृश्य कलकत्ते में इसके पहले कभी भी नहीं देखा गया था। इस नगर सङ्कीर्तन के बाद नूतन ब्रह्म मन्दिर की भित्ति की स्थापना हुई थी। इस ब्रह्म मन्दिर के निर्माण करने के लिये केशव ने अपने दायित्व पर तीन हजार रुपये जमीन खरीदने के लिये कर्ज लिये थे। इसके बाद सन्ध्या समय सिन्दुरिया पट्टी में मृत गोपाल मल्लिक के घर में केशव ने "नवजीवनप्रद विश्वास" पर वक्तृता दी थी। इस वक्तृता में आपकी धर्मपत्नी, सर जान लारेन्स तथा और भी बड़े-बड़े लोग उपस्थित थे। इस वक्तृता द्वारा केशव ने भली भाँति प्रमाणित कर दिया था कि प्रचलित धर्म से स्वर्ग का उन्नत जीवन्त धर्म अत्यन्त अलग है। इस वक्तृता से भली भाँति मालूम होता है कि आपका धर्म जीवन किस प्रकार उच्चतम पवित्र भाव पर सङ्गठित था। इस सभा में उपस्थित पादरी म्यकलड साहब ने आपकी वक्तृता सुनकर आपके प्रति अति श्रद्धा प्रकाशित की थी।

इस प्रकार से धर्मवीर केशव ने ब्रह्मोत्सव, वक्तृता, कथोपकथन और इससे बढ़कर अपने सतेज जीवन्त धर्म जीवन द्वारा ब्रह्मनाम का प्रचार किया था। जिस प्रकार देश से जाति भेद, पौत्तलिकता, भ्रम, कुसंस्कार इत्यादि अप्रीतिकर अमङ्गल

प्रथाओं को दूर करने के लिये आपमें विलक्षण शक्ति, पराक्रम और साहस था, उसी प्रकार उससे भी अधिक तेज और ज्वलन्त विश्वास के साथ आपने देश में एक अद्वितीय ब्रह्म की पूजा, सङ्कीर्तन, देशीय धर्मभाव की स्थापना की थी। हरिप्रेम से मतवाले हो आपने अपने युग के लोगों को मतवाला कर दिया था।

इस उत्सव के बाद केशव सपरिवार मुँगेर पहुँचे और यहाँ कुछ दिन तक रहकर यहाँ के लोगों को ब्रह्म नाम की ओर आकृष्ट किया। इसके बाद यहाँ से दूसरी बार प्रचार कार्य में आपने बम्बई की यात्रा की। अति कष्ट और दु:ख झेलते हुए केशव अपने मित्र चिरञ्जीव शर्मा के साथ बम्बई पहुँचे। आपके सम्मुख घोर कष्ट उपस्थित होने पर भी आप ब्रह्मनाम के प्रचार से कभी भी पश्चात् पद नहीं हुए थे। अति दीन वेश से तीसरे दर्जे में यात्रा करते हुए, पर ब्रह्मतेज से उज्ज्वल, आप बम्बई पहुँचे। वहाँ पहुँचने पर लोगों के घर जा-जाकर आपने उनसे जान-पहचान की। वहाँ केशव ने तीन चार वक्तृताएँ दीं, इससे लोग आपकी शक्ति और महिमा से परिचित हुए। आपका समादर हुआ। आज-कल भी वहाँ कई ब्रह्म उपासक हैं और एक ब्रह्म मन्दिर भी है, पर जिस समय केशव वहाँ गये थे वहाँ के लोग न तो ब्राह्म धर्म से परिचित थे और न तो ब्रह्म मन्दिर था। कुछ दिन के बाद केशव अति कष्ट के साथ मुँगेर लौट आये। लौटने के समय आपके पास यात्रा के लिये एक पैसा भी न था। वहाँ के एक सज्जन कार्शनदास माधोदास ने अर्थ द्वारा आपकी सहायता की थी। इस प्रकार दु:ख-कष्टों को झेलते हुए केशव ने नगर-नगर में ब्रह्मनाम का प्रचार किया था।

मुँगेर लौट आने पर केशव अपने परिवार के साथ यहाँ कई महीनों तक रहे। यहाँ आपके घर पर प्रतिदिन उपासना होती थी; इसके अलावा इसी समय यहाँ कई ब्रह्मोत्सव हुए थे। बहुत-से बङ्गाली युवक इससे ब्राह्मधर्म की ओर आकृष्ट हुए। बहुत-से लोग जो ब्राह्मधर्म की निन्दा करते थे वे भी ब्रह्मभक्ति से विह्वल हो शेष में ब्रह्म धर्म का आश्रय लिया था। इसी समय मुँगेर में इस प्रकार धर्म भाव के प्रवाह से बहुत-से दुश्चरित्र संसारासक्त लोगों के मन में भी धर्म भाव और भगवद्भक्ति का संचार हुआ था। मुँगेर इस तरह कुछ समय तक एक तीर्थ-स्थान बन गया था। जो लोग केशव की ओर जाते थे वे मानों ईश्वर दर्शन और भगवद्भक्ति से उन्मत्त हो जाते थे। इस प्रकार केशव ने मुँगेर के लोगों को प्रेम और भक्ति से मतवाला कर दिया था।

इसी समय केशव ब्राह्म परिवार में विवाह का एक नियम पास कराने के लिये अपने परिवार और बन्धुओं के साथ शिमला गये। इसके पहले पटने में लार्ड लारेन्स के साथ ब्राह्म विवाह विधि के विषय में आपने बातचीत की थी। इसपर लार्ड लारेन्स ने आपको इस बात के लिये शिमला जाने को कहा था। शिमला पहुँचने पर लाट साहब ने आपको वहाँ रहने के घर के खर्च के लिये पाँच सौ रुपये दिये थे और आपसे अति सम्मान के साथ मिले। पर केशव की आर्थिक अवस्था बहुत खराब थी। रहने का घर तो लाट साहब की बदौलत बहुत अच्छा मिला, पर इतने लोगों के आहार इत्यादि के लिये पूरा अर्थ नहीं था। जो हो, विदेश में मित्रों की सहायता से केशव वहाँ

रहे। लाट साहब की सभा में जाने के लिये केशव के बन्धुओं को अच्छी पोशाक तक भी न थी। आपके बन्धुगण अपनी दीन पोशाक पहनकर लाट साहब की सभा में उपस्थित हुए। विवाह-विधि का प्रस्ताव उस सभा में उपस्थित किया गया। शिमला में केशव ने केवल विवाह-विधि ही नहीं पास कराई, पर आप जब तक यहाँ रहे अपनी वक्तृता द्वारा लोगो का मन भी धर्म की ओर आकृष्ट किया था। यहाँ जिस प्रकार आपने राजपुरुषों के साथ परिचय लाभ कर सम्मान पाया था उसी प्रकार धर्मानुरागी बन्धुओं के साथ साधन भजन कर अत्यन्त आनन्द का भी उपभोग किया था। इस प्रकार केशव सर्वदा एक साथ समाज संस्कार, धर्म-साधन और धर्म-प्रचार एक साथ किया करते थे। केशव प्राय: एक महीने तक शिमला में अपना कार्य कर कलकत्ते लौट आये।

शिमला जाने और वहाँ से लौटने के समय केशव कानपुर, लखनऊ, इलाहाबाद इत्यादि स्थानों मे ब्रह्मनाम का प्रचार करते गये थे। इन स्थानों के लोग केशव की वक्तृता, प्रार्थना, उपदेश सुनकर आपके प्रति अत्यन्त श्रद्धालु और मुग्ध हो गये थे। कोई-कोई तो आपके प्रति ऐसे आकृष्ट हो गये थे कि आपकी अत्यन्त भक्ति करने लगे और इससे किसी-किसी के मन में नर-पूजा का सन्देह उपस्थित हुआ। इस कारण चारों ओर इस विषय में नाना प्रकार की बातें उठने लगीं। इसे देख केशव अत्यन्त दु खित हुए और क्रन्दन करने लगे। प्रार्थना के समय विनयपूर्वक अश्रुधारा बहा अपनी दीनता प्रकाशित करने लगे। साफ तौर से आपने कहा है कि आप प्रभु नहीं थे, सबका

दास थे; पवित्र नहीं, महापापी थे, पर इसपर भी लोगों के मन का सन्देह दूर नहीं हुआ था। विजयकृष्ण गोस्वामी और यदुनाथ चक्रवर्त्ती केशव के विरोधी हुए। केशव ने इनको बहुत-कुछ समझाकर लिखा था, पर ये दोनों आपके घोर विरोधी हुए और चारों ओर आपकी निन्दा और विरोध करने लगे और प्रचारक का कार्य छोड़कर फिर विषय कार्य अवलम्बन किया। पीछे केशव के विरुद्ध जो अपवाद लगाया गया था वह सब मिथ्या हुआ। केशव अटल और अचल भाव से अपने महान् कार्य में डटे रहे। इन सब विषयों में जो कोई आपसे कुछ पूछने आता था उसे आप कुछ उत्तर नहीं देते थे, केवल इतना ही कहते थे कि जो मेरे चरित्र में अविश्वास करता है वह किस प्रकार मेरी बातों का विश्वास कर सकता है; पर सत् और भद्रभाव से जो आपसे कुछ इस विषय में जानना चाहता था उसे आप सब कह देते थे। केशव ने इस विषय में इस प्रकार एक पत्र लिखा था—"जिन्हें मैंने मन की बात और हृदय की प्रीति दी थी, उन्होंने मुझे महा भयानक और सर्वापेक्षा हृदयविदारक अपराध से जनता के निकट अपराधी करने की चेष्टा की है। एकमात्र परित्राता ईश्वर की भक्ति के साथ उपासना, जो मेरा विश्वस्त और जीवन का लक्ष्य है, उसे विलुप्त करने का दोष मेरे प्रति आरोपण किया गया। निकटस्थ बन्धुओं ने मुझे इतने दिनों के बाद अहङ्कारी, कपटी, पिता का प्रभुत्वापहारक, पौत्तलिकता का प्रवर्त्तक और आत्मपूजा का प्रचारक कहकर अभियुक्त किया। बन्धुओं के निकट इस भयानक दोष को खण्डित करने में प्रवृत्ति नहीं होती है। ईश्वर

के निकट मैं इस विषय में निरपराध हूँ, यही मेरे लिये यथेष्ट है। उक्त भाइयों के निकट मेरा यही अनुरोध है कि वे जिस में यह न समझें कि मैंने उनके मेरे प्रति निर्दय व्यवहार करने के कारण उनको छोड़ दिया है। मेरे मत और चरित्र के सम्बन्ध में उनका वैसा सरल विश्वास मेरी इच्छा के विरुद्ध है, पर फिर भी उस सरल विश्वास के प्रति मेरी श्रद्धा रखनी कर्त्तव्य है। पहली बात तो यह है कि उनलोगों के प्रति मैं चिरकृतज्ञता-ऋण से आबद्ध हूँ। दूसरी बात यह है कि उनकी और उनके परिवार की सेवा करने की इच्छा मेरे हृदय के साथ ग्रथित है। ईश्वर एकमात्र पापी का परित्राता है। मनुष्य अथवा जड़ जगत् परित्राण-पथ में सहायक हो सकता है। मनुष्य को मनुष्य-ज्ञान से जितनी भक्ति की जा सकती है, उसमें कुछ भी दोष नहीं है। गुरु अथवा साधु को पूर्णब्रह्म अथवा ईश्वर के समान अथवा उनका एकमात्र अवतार ज्ञान से भक्ति करनी ब्राह्मधर्म विरुद्ध है। मैं यदि मध्यवर्त्ती होकर प्रार्थना करूँ, तो ईश्वर मेरे अनुरोध से अथवा पुण्य गुण से दूसरे को क्षमा अथवा परित्राण करेंगे, मुझे इस प्रकार कभी भ्रम नहीं हुआ है। तब मैं यह विश्वास करता हूँ कि सरल भाव से परस्पर के मङ्गल के लिये ईश्वर के निकट हमसबको प्रार्थना करना कर्त्तव्य है और वह प्रार्थना भक्तिसम्भूत होने ही से दयामय पिता उसे स्वीकृत करते हैं। जिस प्रणाली से मेरे किसी भ्राता ने मेरा सम्मान किया हो, मैं कभी भी उसका अनुमोदन नहीं करता हूँ, क्योंकि पहले तो मैं उसका उपयुक्त नहीं हूँ। लोग जिस प्रकार मुझे साधुवाद दान करते हैं, मेरा हृदय उस प्रकार का नहीं

:, इसे मैं सर्वदा ही अनुभव करता हूँ। बन्धुओं ने मेरे निकट
जिन सब उपकारों को पाया है, उससे मेरे अपवित्र मन का
गौरव कुछ भी नहीं है, ईश्वर ही उसका मूल कारण है, क्योंकि
वह सामान्य निकृष्ट उपाय से भी बहुत समय जगत् का हित
साधन करते हैं। मुझे अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि मेरे
ब्राह्म भ्राताओं के भीतर बहुतों की ईश्वर-भक्ति और साधुता मुझ-
से अधिक है, और वे मेरे परित्राण का एक विशेष उपाय हैं।
दूसरी बात तो यह है कि बाहरी सम्मान का आडम्बर मेरी
समझ में अन्याय और अनावश्यक है। यथार्थ श्रद्धा-भक्ति आन्त-
रिक है; बाहरी लक्षण के ह्रास होने से इसकी विशेष क्षति होने
की सम्भावना नहीं है। किन्तु पक्षान्तर में श्रद्धा-प्रकाश का
आतिशय्य होने से, दूसरे का बहुत अनिष्ट हो सकता है। इसी
कारण यह जितना छोड़ा जाय, उतना ही अच्छा है। उल्लिखित
सम्मान के सम्बन्ध में मेरा अमत और सङ्कोच मैंने बार-बार
बन्धुओं के निकट प्रकाशित किया है। दूसरे की स्वाधीनता के
ऊपर हस्तक्षेप करने का मेरा अधिकार नहीं है। बन्धुओं को
अधीन कर, अनुरोध आदेश द्वारा मेरे मत की ओर लाना, मेरी
प्रवृत्ति और धर्म-संस्कार दोनों ही के विरुद्ध है। ब्राह्मधर्म में
विश्वास रहने ही से मेरे निकट सभी ब्राह्म परिगणित और
समादृत होते हैं; उनके अतिरिक्त विषय में किसी को भ्रम और
अविश्वास रहने से मुझे त्याग करने का अधिकार नहीं है, बल्कि
निकट रखकर क्रमशः उनको सत्य के पथ में लाना होगा। निर्दय
रूप से ऐसे भ्राताओं को विदा करने से मैं घोर अपराध से
अपराधी होऊँगा।"

कुछ समय के बाद विजयकृष्ण ने अपना दोष स्वीकार किया और फिर प्रचारकदल में मिले, पर यदुनाथ प्रचारकदल में फिर नहीं लौटे, परन्तु इनके प्रति केशव की प्रीति कभी नहीं कमी थी। विरोधी होने पर भी उदारात्मा केशव सर्वदा इनका आदर-सम्मान और सांसारिक उपकार किया करते थे।

केशव के जीवन में यह एक अति घोर परीक्षा हुई थी। इसी प्रकार देश के लोगों ने अज्ञानता और भ्रम में डूबकर केशव के पथ में नाना प्रकार की बाधाओं को समय-समय पर उपस्थित किया था, पर भक्त केशव परमेश्वर के कृपा-बल से उन सब बाधाओं को दूरकर ब्रह्मनाम की महिमा प्रचार करते गये। इस प्रकार की परीक्षा और आपके कार्यों में बाधा-विघ्नों की उपस्थिति से केशव की भक्ति और विश्वास अति प्रबल और सतेज होता गया। इस प्रकार आपका सारा जीवन प्रभूत पराक्रम और अपराजित धर्म-साहस का परिचय देता है।

उदार धर्म की विस्तीर्ण भूमि पर दृढ़ भाव से खड़े होकर क्रियाशील धर्मभीरु केशव ने केवल काल्पनिक रूप से ब्राह्मनाम का प्रचार नहीं किया था, धर्म को जीवन के साथ सङ्गठितकर मानवजीवन में ब्राह्म का परिचय पाना और फिर इसी जीवनद्वारा इस संसार में ब्राह्म का परिचय देना आपके धर्मभाव का प्रधान उद्देश्य था। मानव के सांसारिक जीवन में उसका धर्मजीवन मिलित है, धर्म और संसार एक है। इसे आधुनिक काल में केशव अपने जीवनद्वारा प्रचार कर गये हैं। इसी महान् व्रत के साधन में आपने अपने को उत्सर्ग किया था और इसी की पूर्ति के लिये अटल भाव से अपने विरोधियों की

निन्दा, अपवाद, बाधा-विघ्नों के भीतर भी पूरा उत्साह और उद्यम के साथ अपना कार्य करते गये। इसी महानुभावता के कारण आप देश के सभी लोगों के साथ मिलकर देश के बहुत से हितकर कार्य कर गये हैं। देश के बड़े-बड़े कार्यक्षेत्रों में शिक्षित धनीमानी व्यक्ति के साथ केशव सर्वदा मिलकर काम किया करते थे और सभी जन-हितैषी कार्यों में आप सम्मिलित रहा करते थे।

अभीतक केशव अपने बन्धुओं और सहसाधकों के साथ अपने कलुटोले के घर ही में पूजा-उपासना करते थे। इस समय नूतन ब्रह्म मन्दिर के चारों ओर केवल दीवाल ही उठी थी। दूसरे साल का माघोत्सव निकट हो रहा था। केशव ने इस मन्दिर को इसी अवस्था में प्रतिष्ठित किया। इस अवसर पर एक महान् उत्सव और नगर सङ्कीर्तन हुआ था। इसकी प्रतिष्ठा के समय केशव ने जो कहा था सो यह है—"जितना सत्य पृथ्वी पर प्रचलित था, उसके प्रति श्रद्धा रखने के लिये यह गृह प्रतिष्ठित होता है। कलह-विवाद, जात्यभिमान जिसमें विनष्ट हो, भ्रातृभाव स्थापित हो, इसी के लिये यह मन्दिर है। जो आचार्य बनकर यहाँ की वेदी से उपदेश देंगे, सब पापी समझकर उनकी विवेचना करेंगे। वे उपदेश दे सकते हैं इसलिये इस विषय में उन्होंने यह भार पाया है। यहाँ ईश्वर के लिये जिस नाम और भाषा का व्यवहार किया जाता है, सो मनुष्य के लिये नहीं किया जायगा। ईश्वर के प्रसाद से ब्राह्म और दूसरे-दूसरे भाइयों की सहायता से यह गृह आरम्भ हुआ है। यद्यपि यह सम्पूर्ण नहीं हुआ है, ईश्वर की करुणा से, भाइयों के यत्न से

यह सम्पन्न होगा। यह गृह, जो संस्थापित हो रहा है, सब को गोचर करता हूँ कि किसी व्यक्ति विशेष की अर्थ-सहायता से नहीं हुआ है। जिन्होंने सहायता दान किया है वे धन्य हैं। जिन्होंने इसके निर्माण में शारीरिक मानसिक परिश्रम किया है, वे धन्य हैं। इस गृह की सब ईंटें परस्पर जिस प्रकार एकत्र हैं, ब्राह्मगण उसी प्रकार मिले रहेंगे। जिसमें इस देश से कुसंस्कार दूर हो, भिन्न-भिन्न जातियाँ भ्रातृभाव से एकत्र कर ईश्वर के निकट लाई जायँ, इसी लिये मन्दिर प्रतिष्ठित हुआ। महात्मा राममोहन राय और प्रधान आचार्य महाशय (महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर) को धन्यवाद है। यह निस्संदेह उनलोगों के यत्न का फल है।"

इस मन्दिर-प्रतिष्ठा के उत्सव में नाना जातियों के लोगों ने एक साथ भगवान् का गुणगान, साधन, भजन किया था। इस प्रकार कलकत्ते में ब्राह्म मन्दिर प्रतिष्ठित हुआ था। यह मन्दिर केशव का एक अपूर्व कीर्तिस्तम्भ है। शून्य हाथ पर केवल ईश्वर के ऊपर पूर्ण विश्वास और भरोसे के बल से आपने बीस हजार रुपये खर्च कर इसे सुसम्पन्न किया था। नींव पड़ने के बाद चारों ओर से रुपये आने लगे। आप अपने सहयोगी बन्धुओं के साथ अग्निमय उत्साह से मन्दिर के निर्माण में काम करने लगे। यह मन्दिर मछुआ बाजार में वर्त्तमान है।

आजकल इस रास्ते का नाम केशवचन्द्र सेन स्ट्रीट है। मन्दिर-प्रतिष्ठा-उत्सव के बाद केशव अपने कई बन्धुओं के साथ ढाका गये थे। १८६९ ई० की २२ अगस्त को इस ब्राह्म मन्दिर का द्वार विधिपूर्वक खोला गया। इस उत्सव का विज्ञापन चारों

ओर दिया गया। केशव की यह आन्तरिक इच्छा थी कि प्रधान आचार्य महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर इस अनुष्ठान का कार्य करें। बहुत चेष्टा करने पर आपको अनुमति मिली, पर अन्त में यह कार्य में परिणत नहीं हुआ और शेष में केशव ही को यह अनुष्ठान करना पड़ा। इस दिन का उत्सव एक अपूर्व अलौकिक स्वर्ग की शोभा से परिपूर्ण था। सबके मुखमण्डल पर स्वर्ग का अग्निमय उत्साह और उद्यम की झलक देख पड़ती थी। देव और नरलोकवासी साधु महाजनों के साथ एकीभूत हो केशव ने इस प्रकार ब्राह्म-मन्दिर की प्रतिष्ठा की। चारों ओर से यात्रिदल इस अवसर पर यहाँ पधारे थे और इस उपलक्ष्य में बहुत-से सुशिक्षित, सुयोग्य विश्वविद्यालय के उपाधिधारी युवक ब्राह्मधर्म में दीक्षित हुए थे। अब प्रति रविवार को इसी मन्दिर में उपासना होने लगी। इस उपासना में ब्राह्म-समाज के सभी लोग और बाहर के भी भद्र, शिक्षित, मानी, पदस्थ लोग योग देते थे। इन सबलोगों से मन्दिर भर जाता था। हिन्दू-महिलाएँ भी उत्साह के साथ योग देती थीं। इस प्रकार उपासना और उपदेश सुनकर लोगों के मन में विश्वास, भक्ति और आशा का सञ्चार हुआ। भक्त और धर्मभीरु साधक-साधिकाओं के साधन के लिये यह धर्म मन्दिर एक महान् क्षेत्र हुआ। इस प्रकार भारत में कार्यकर केशव इंगलैंड-यात्रा की तैयारी करने लगे।

नहीं समझता हूँ। मेरे जीवन का उद्देश्य यही है कि भाइयों को ईश्वर के निकट लाऊँ, वे अपनी शिक्षा देंगे मैं जिसमें व्यवधान न होऊँ। जो मेरे उपदेश से साक्षात् सम्बन्ध में ईश्वर के निकट सब प्रश्नों के उत्तर लेते हैं, वही मेरे शिष्य हैं। जो कहते हैं कि वे मुझे प्यार करते और, मैं जिन भाइयों को इस मत में लाया हूँ उन्हें वह प्यार नहीं करते हैं, वे झूठ बोलते हैं।"

"जिन-जिन कारणों से उपासकों में विवाद होने की सम्भावना हो, मेरे रहते उन सबको दूर करना उचित है। कई मतों में हमलोगों को आपस में प्रभेद रह सकता है। जैसे—(१) ईश्वर महापुरुष प्रेरित करते हैं या नहीं? (२) विशेष कृपा। (३) भक्ति-भिन्न मुक्ति नहीं होती है। (४) अनुताप-भिन्न धर्म साधन में चेष्टा भी विफल है। (५) गुरु-भक्ति। (६) वैराग्य। इन सब विषयों में प्रभेद है और रहना भी आवश्यक है, किन्तु इसे पहले जान रखना उचित है। जो इन सब विषयों में सम्पूर्ण विश्वास करते हैं, वे ब्राह्म हैं, जो संपूर्ण अविश्वास करते हैं, वे भी ब्राह्म हैं। इस प्रकार प्रभेद रहने पर भी साधारण विषय मे एकमत रहने का अङ्गीकार करना होगा। मूल मत में जबतक विश्वास रहेगा, एक साथ तबतक ब्राह्म-मन्दिर में उपासना करना। मेरा मत सम्पूर्ण प्रकाशित नहीं हुआ है। लोग जो-कुछ कहते हैं, उनका बहुत-कुछ अपना है। ईश्वर को मङ्गलस्वरूप नहीं कहकर निष्ठुर कहने से मूल मत का प्रभेद होता है। इस अवस्था में एकता नहीं रह सकती है। सूक्ष्म-सूक्ष्म मत से

परस्पर की स्वाधीनता के ऊपर कोई हस्तक्षेप नहीं करेंगे। मन्दिर का कर्जा अदा नहीं होने से इसकी लिखा-पढ़ी नहीं हो सकती है।"

यात्रा के समय जहाज पर एक दिन यात्रियों के साथ केशव ने उपासना और वक्तृता की थी। लंदन पहुँचने पर केशव पहले एक किराये के मकान में ठहरे। इस मकान में आप प्रायः एक महीने तक रहे। आपने प्रधान-प्रधान लोगों के साथ भेंट की। लार्ड लारेन्स साहब ने अपने वहाँ के सम्भ्रान्त बड़े राजपुरुषों के साथ आपका परिचय करा दिया। केशव के लंदन पहुँचने का संवाद चारों ओर फैल गया। १२ वीं अप्रैल को हनोवर स्क्वायर में केशव की अभ्यर्थना के लिये एक महासभा हुई थी। इस प्रकार की अभ्यर्थना की उदार सभा अति अभूत ही हुई है। इस सभा में कैथलिक सम्प्रदाय को छोड़कर ईसाई समाज के प्राय. सभी सम्प्रदायों के प्रतिनिधि उपस्थित थे। महारानी विक्टोरिया के पुरोहित जी० स्टानली और बहुत से प्रसिद्ध विद्वान व्यक्तियों ने अपनी-अपनी वक्तृताओं के द्वारा केशव की सादर अभ्यर्थना की थी। इस प्रकार सभा में उपस्थित महापुरुषो का उत्साह और सहानुभूति पाकर केशव ने बहुत कृतज्ञता के साथ अँगरेज जाति के प्रति श्रद्धा और प्रीति प्रकाशित की और एक वक्तृता दी। आपकी वक्तृता से सभा में उपस्थित सज्जन वृन्द चकित और मुग्ध हो गये एवं आपका नाम चारों ओर फैल गया।

केशव के पास केवल एक महीने का खर्च था। जैसे ही आपका सब रुपया खर्च हो गया, चारों ओर से आपको

सहायता पहुँचने लगी और लोगों ने आपको अपने साथ रहने के लिये आमंत्रित किया। इउनिटेरियन सम्प्रदाय के सेक्रेटरी (Secretary) प्रेमिक रेवरण्ड स्पियार्स केशव को अपने घर में ले गये और आपके लिये अच्छी व्यवस्था कर दी। यहाँ छ महीने तक केशव रहे। आपके रहने का खर्च और भारतवर्ष लौटने का खर्च इसी सम्प्रदाय के ईसाइयों ने दिया था, इसके अलावा पाँच हजार मुद्राएँ केशव के परिवार को आपलोगों ने दान में दी थीं। इस प्रकार इंगलैंड के लोगों ने केशव के साथ अति प्रीति और श्रद्धा के साथ व्यवहार किया था और आपकी सहायता के लिये मुक्तहस्त से दान देते थे।

केशवचन्द्र सेन जबतक इगलैंड में रहे, आप अपनी वक्तृताएँ और उपदेश भिन्न-भिन्न स्थानों और मन्दिरों में देते रहे। डाक्टर मार्टिनो के मन्दिर में आपने "ईश्वर प्राण के प्राण हैं" विषय पर पहला उपदेश दिया था। इसी प्रकार दूसरे-दूसरे विषयों में आप उपदेश और वक्तृताएँ देते रहे। ईसाई समाज के बड़े-बड़े विद्वान् और शिक्षित पादरी और प्रचारक आपकी वक्तृताओं को सुन अत्यन्त मुग्ध हो जाते थे। एक समय एक ने आपसे कहा था—"सचमुच, सेन महाशय, हमलोगों को उचित है कि हमलोग आपके पदतल में बैठकर कुछ शिक्षा ग्रहण करें।" जिन्होंने आपकी पहली कई वक्तृताओं को सुनकर समझा था कि आप लाटिन-ग्रीक भाषा नहीं जानते हैं, इसलिये आप अँगरेज जाति को भविष्य में अपनी वक्तृताओं से प्रायः सन्तुष्ट नहीं कर सकेंगे, उनलोगों का मत भी आपकी पिछली कई ज्वलन्त विश्वासपूर्ण वक्तृताएँ सुन बदल गया। एक ने तो, जिसने

आपसे पहले कहा था कि आप यहाँ के लोगों को सन्तुष्ट नहीं कर सकेंगे, आपके निकट फिर जाकर प्रकाशभाव से कहा—"मिस्टर सेन, आप मुझे क्षमा करें। मुझे आपके विषय में भूल धारणा थी। आपने स्वभावत. उन सब मानसिक और अध्यात्मिक शक्तियों को अधिकार में किया है, जिस कारण आप हम लोगों की अपेक्षा बहुत उच्च स्थान में वास करते हैं और हम-लोग जिसे बुद्धिद्वारा समझने की चेष्टा करते हैं, वह आपके लिये प्रत्यक्ष विषय है। हमलोग बहुत-सी पुस्तकों को पढ़कर जिस विषय में चिन्ताकर परिश्रान्त होते हैं, वह सारा विज्ञान, जो दर्शन का मूल प्रस्रवण है, आपके अधिकार में है।"

इस प्रकार प्रधान नगर लंदन में ब्रह्मनाम का प्रचारकर ब्रह्मानन्द केशवचन्द्र सेन इंगलैंड के दूसरे-दूसरे नगरों में परिभ्रमण करने की इच्छा से लंदन से १२ जून को रवाना हुए। दूसरे-दूसरे नगरों में आपके परिभ्रमण का संवाद, आपके रहन सहन, आचार-व्यवहार, खान-पान, कार्य-व्यवहार इत्यादि सब-का पूरा विवरण पहले ही आपके बन्धुओं ने सब नगरों में भेज दिया था, जिसमें सब कोई आपका यथेष्ट आदर-सम्मान करें और आपके ठहरने का अच्छा बन्दोबस्त हो इसके लिये आपके बन्धुओं ने पत्रादि द्वारा पूरा बन्दोबस्त कर दिया था। सभी स्थानों में इउनिटेरियन सम्प्रदाय का मन्दिर और वास-भवन सर्वदा आपके लिये उन्मुक्त था।

सबसे पहले केशव लंदन से ब्रिस्टल नगर में आये। यहाँ आप कुमारी कार्पेण्टर के भवन में ठहरे। यहाँ आपने उन्हीं-उन्हीं मन्दिरों में उपासना की और नवजीवन विषय पर उपदेश

दिये, जहाँ राजा राममोहन राय जाया करते थे। आपने इस अवसर पर राजा राममोहन राय की आत्मा के मङ्गल के लिये प्रार्थना की। तीसरे पहर में राजा के समाधि-स्थान में गये और वहाँ अपने बन्धुओं के साथ घुटनों पर प्रार्थना कर अपना नाम लिखा था।

ब्रिस्टल से केशव बाथ, स्ट्राटफोर्ड, लिचेस्टर, बर्मिङ्घम, नटिङ्घम, मैंचेस्टर इत्यादि नगरों में गये। जहाँ-जहाँ आप गये थे सभी जगहों में लोगों ने आप का पूरा आदर-सत्कार किया था और सभी जगह आपने अपनी माधुरी कथा-वार्ता और वक्तृता से लोगों को मुग्ध और चकित किया था। जिन-लोगों ने पहले आपके प्रति कुछ विद्वेष-भाव प्रकाशित किया था। उनलोगों ने भी पीछे आपके गुणों को जानकर आपके प्रति प्रशंसा और सम्मान प्रकट किया था। जब आप नटिङ्घम नगर में पहुँचे तब आपके पास एक पत्र पहुँचा जिसमें चालीस पादरियों का दस्तखत था और इसका अभिप्राय यह था—"क्रिष्टियान नहीं होने से परित्राण नहीं है, तुम क्रिष्टियान होगे या नहीं ?" केशव ने साफ तौर से इसका उत्तर दिया—"मैं आपलोगों के मत-अनुसार क्रिष्टियान नहीं होऊँगा, किन्तु यीशस की विनय, भक्ति, आत्म त्याग और प्रेम मेरा प्रार्थनीय है।"

इंगलैंड में केशव जबतक रहे बराबर आप कठिन कार्य करते रहे, किसी दिन भी आपको सभा, वक्तृता, उपदेश, कथोपकथन, आलोचना इत्यादि से विराम न था। इनके अलावा, नाना स्थानों में पत्र लिखना, और बन्धुओं से आलाप परिचय करना था। इस प्रकार प्रतिदिन कठिन परिश्रम आपके सम्मुख था,

पर आपके आहार का वैसा बन्दोबस्त नहीं था, विलायती खाना खाते-खाते आपको अरुचि हो गई थी, दूध भी प्रायः जल ही के ऐसा था। प्रायः आप भूखे ही रह जाते थे। इन सब कारणों से आपका शरीर दिन-दिन दुर्वल होता गया। मस्तिष्क निष्पेषित और भाराक्रान्त हो गया और सर में चक्कर आने लगा। केशव रोग-ग्रस्त हो गये। इस समय आप रेवरिण्ड हार्डफोर्ड ब्रुक के घर में रहते थे। ब्रुक साहब और उनकी पत्नी अति चिन्तित हुए और अतिस्नेह और यत्न के साथ आपकी सेवा-शुश्रूषा करने लगे। पीड़ित अवस्था में केशव मैनचेस्टर से लिवरपुल आये और वहाँ आपके आगमन के उपलक्ष्य में एक सभा हुई। इस सभा में भी आपने वक्तृता दी और इसके दूसरे दिन भी एक वक्तृता दी। फल यह हुआ कि आपका शरीर अति दुर्वल हो गया और आपकी पीड़ा बढ़ गई। दो सप्ताह तक आपको सब काम-काज बन्द करना पड़ा। आप दो सप्ताह तक डयारन साहब के घर में रहे और यहाँ आपकी चिकित्सा होने लगी। इतने पर भी आपने सङ्कल्प किया था कि आप अमेरिका जायँगे, पर चिकित्सकों ने प्रतिवाद किया और शेष में आपको इस आशा को छोड़ना पड़ा। आपके रोग की खबर सुनकर देश-विदेश के आत्मीय बन्धुगण बड़े चिन्तित और दुःखित हुए। राजा राममोहन राय की मृत्यु इंगलैंड में हुई थी। इस बात को यादकर सबको और भी अधिक चिन्ता और व्यथा हुई; पर करुणामय परमेश्वर की कृपा से केशव आरोग्य हुए और जब देश-विदेश में यह खबर मिली कि केशव पूर्ण आरोग्य हुए हैं, आपके बन्धु-बान्धव निश्चिन्त हुए।

आरोग्य होने पर केशव फिर लदन आये। यहाँ आपने इस देश की प्रजा की अवस्था और स्त्री-शिक्षा पर कई वक्तृताएँ दीं। कई दिन यहाँ रहकर आप एडिनवरा, ग्लासगो, लिड्स इत्यादि नगर में गये थे। आक्सफोर्ड में आपको विख्यात परिडत मैक्समूलर के साथ भेंट हुई। मैक्समूलर साहब आपको नेवता देकर अपने घर ले गये थे। ग्ल्याडस्टोन, डाक्टर पिउनी, डीन स्टानली, जॉन स्टुयार्ट मिल, निउमन, भिसकम्ब, काउएल इत्यादि बहुत-से सुविख्यात बड़े-बड़े लोगों के साथ आपका परिचय हुआ था और सबने आपका पूरा आदर-सत्कार किया था। भारतेश्वरी महारानी विक्टोरिया एसबर्न प्रासाद में केशव के साथ भेंटकर आपको सम्मानित और कृत-कृत्य किया था। भारत की उन्नति के विषय में कई बातें हुई थीं। महारानी ने आपको अपनी तस्वीर और अपने स्वामी के जीवनचरित्र के दो खण्ड ग्रंथ उपहार दिये थे। ये दोनों पुस्तकें महारानी के हस्ताक्षर से अलंकृत थीं। इसी अवसर पर राजपुत्र लियोफेल्ड ने केशव का हस्ताक्षर लिया था। केशव ने महारानी के प्रासाद में निरामिष भोजनकर और महारानी के प्रदत्त उपहारों को लेकर अति आनन्द और कृतज्ञता के साथ विदाई ली। आपने इस अवसर पर अपनी सहधर्मिणी की तस्वीर महारानी को दी थी।

अब केशव ने इंगलैंड से अपने देश में लौटने की इच्छा की। आपको विदाई देने के लिये १२ सितम्बर को बड़ी धूम-धाम और समारोह के साथ हनोवर स्कायर में फिर एक सभा हुई थी। इस सभा में ग्यारह विभिन्न सम्प्रदायों के ईसाई पादरीगण

उपस्थित थे। सभा के आरम्भ में रेवरंड रिपयार्स ने ये बातें कही थीं—"केशव बाबू ने इंगलैंड और स्कौटलैंड में चौदह प्रधान-प्रधान नगर देखे हैं। बपटिस्ट कनग्रैगशनल (Buptist congregationl) और इउनिटेरियन के मन्दिर में आपने उपदेश दिया है। इनके अलावा चालीस नगरों से निमन्त्रण पत्र आये थे, इन्हें आप ग्रहण नहीं कर सके। चालीस सहस्र श्रोताओं के सम्मुख सत्तर प्रकाश्य सभाओं में आपने नाना विषयों मे वक्तृताएँ दी हैं। बहुत सी छोटी-छोटी सभाओं और गृहस्थ-भवनों में उपस्थित रहकर कहीं धर्मालोचना, कहीं देश की अवस्था का वर्णन, और कहीं तो छोटी-छोटी वक्तृताएँ की हैं।" स्त्री-शिक्षा, साधारण-शिक्षा, मद्यपाननिवारण और धर्म इन्हीं कई विषयों में केशव जहाँ-तहाँ अपने मन का भाव प्रकाश करते थे। आपने राजनीतिज्ञ और राजपुरुषों के निकट इन सब विषयों और देश की दुर्गति के विषय में वार्त्तालाप किया था।

केशव के लदन आने पर वहाँ एक ब्राह्मसमाज, और ब्रैस्टल में नैशनल सभा स्थापित हुई थी। आपके संसर्ग से धार्मिक क्रिश्चियनों की दृष्टि भारत की ओर पड़ी और दोनों देशों की सुरापाननिवारिणी सभाओं में परस्पर बहुत योग हुआ। सभी श्रेणियों और सभी सम्प्रदायों के लोगों ने केशव का अत्यन्त आदर-सत्कार किया था। आपको देखकर इंगलैंड के लोगों की धारणा हुई थी कि भारत सामान्य स्थान नहीं है। आपकी वक्तृताएँ सुनकर सभी नर-नारी आपके साथ आलाप-परिचय करने के लिये उत्सुक और व्याकुल हुए थे। आपकी विदाई के

समय राशि-राशि ग्रन्थ, वस्त्र, अलङ्कार, शिल्प-द्रव्य इत्यादि उपहार से लोगों ने आपके प्रति सद्भाव, श्रद्धा और सत्कार दिखाया था। प्रस्थान के समय आपने वहाँ के बन्धुओं की दया, स्नेह याद करते हुए ये बातें कही थीं—"भ्रातृगण! अभी मेरी शेष बात कहने का समय आया है। इंगलैंड छोड़ कर मैं अब जाता हूँ, परन्तु मेरा हृदय आपलोगों के साथ चिर दिन रहेगा। प्रिय इंगलैंड! मुझे विदाई दो। दोष-त्रुटि रहते हुए भी मैं तुमको प्यार करता हूँ। हे शेक्सपियर और मिल्टन के देश! स्वाधीनता दयाशीलता के देश! विदा दो। हे मेरे क्षणस्थायी भवन! तुम्हारे भीतर रहकर मैंने भ्रातृ-प्रेम की मधुरता भोग की है। हे मेरे पिता के पश्चिमगृह! प्रियतम भाई-भगिनियो! विदा दो।"

१८७० ई० में १७ सितम्बर को केशव साउथमटन नगर में जहाज पर चढ़े। आपके कई विशेष बन्धु आपको यहाँ तक पहुँचाने के लिये आये थे। यहाँ पहुँचने पर यहाँ के देवालय में भी कई भद्रलोगों के अनुरोध से आपको कुछ बोलना पड़ा था। १६ अक्तूबर को आप बम्बई पहुँचे थे। आपके आगमन का संवाद सुनकर बम्बई के निवासियों ने आपका आदर-सत्कार करने के लिये एक सभा की थी। इस सभा में आपने अँगरेज जाति की सामाजिक और पारिवारिक अवस्था का वर्णन किया था। आपकी वक्तृता सुनकर बम्बई निवासी अत्यन्त चमत्कृत और आह्लादित हुए थे। जब आप २० अक्तूबर को हवड़ा स्टेशन पर पहुँचे, वहाँ पर आपका स्वागत एवं आदर-सत्कार करने के लिये जो ब्राह्म और दूसरे-दूसरे

सत्समाजों के जो बन्धुगण गये थे उनकी जय और आनन्द-ध्वनि से सारा स्थान गूँज गया था। वहाँ से आप अपने बन्धु-बान्धवों के साथ कलूटोला भवन में पहुँचे। आठ महीने के बाद केशव आनन्द के साथ अपने देश में लौटे। आपको स्वस्थ, सबल और प्रसन्न पाकर लोगों के आनन्द की सीमा न रही। सभी आपका यथोचित आदर-सत्कार कर आपसे इंगलैंड की कहानी सुनने लगे।

इंगलैंड से लौटने पर प्रथम रविवार को केशवचन्द्रसेन ने मन्दिर में उपासना की और इस अवसर पर आनन्द तथा कृतज्ञ हृदय के साथ ईश्वर-कृपा की महिमा की व्याख्या की। आपने देश के प्रधान बड़े-बड़े लोगों से आलाप-परिचय किया और नवीन उत्साह और उद्यम के साथ देश के सत्कार्य साधन में लगे। इसी समय ब्राह्मसमाज के बहुत-से सत्कार्यों का आरम्भ हुआ। प्रचार कार्यालय की बहुत-कुछ उन्नति हुई। १८७० ई० में दूसरी नवम्बर को "भारत-संस्कार" सभा स्थापित हुई। सुलभ साहित्य, दातव्य, श्रम जीवियों की शिक्षा, स्त्री-विद्यालय और मद्यपान निवारण इस सभा के प्रधान कार्य थे। "सुलभ समाचार" संवाद पत्रद्वारा बङ्गला भाषा का प्रचार हुआ। इस पत्र का मूल्य एक पैसा था। इस पत्र से अनेकों का अत्यन्त उपकार हुआ। सभी लोगों में यह प्रचलित हुआ और उनकी बङ्गला भाषा की अभिरुचि जगी। धनी-दरिद्र, नर-नारी सबके लिये यह पत्र अति सुलभ और उपकारी था। नाना प्रकार के विषयों में शिक्षाप्रद सुन्दर प्रबन्धों को पढ़कर सभी आनन्द और प्रीति प्राप्त करते थे।

भारत-संस्कार सभा के प्रत्येक विभाग ने अति उद्यम और उत्साह के साथ अपना-अपना काम कर भारत को सचमुच में जगा दिया। इसके प्रभाव से नाना स्थान में सत्कार्यों का आरम्भ हुआ। १८७१ ई० की पहली जनवरी से "इंडियन मिरार" दैनिक पत्र हो गया। यह भी एक नया अनुष्ठान हुआ।

ब्रह्मानन्द केशवचन्द्र सेन ने इस प्रकार नानाविध सत्कार्यों को सम्पादितकर देश में शिक्षा और यथार्थ धर्म का स्रोत प्रवाहित कर दिया। ब्राह्म परिवार सर्व प्रकार एक आदर्श-स्वरूप हो देश पर प्रभाव डाल सके, इसके लिये आप विशेष यत्न और उद्योग करने लगे। प्रधान आचार्य महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर के साथ मिलन के लिये आपने फिर एक बार चेष्टा की। यद्यपि बाहरी रूप से मिलन नहीं हो सका, तोभी कलूटोला और ब्रह्म-मन्दिर में महर्षि उपासना में योग देते थे और मन्दिर में उन्होंने एक बार उपासना भी की थी। महर्षि ने केशव के मिलन और सामञ्जस्य के धर्म का मर्म भली भाँति समझा था और प्रकाश्य भाव से प्रीति भी प्रकट की थी तथा परस्पर के विशेष वैचित्र्य और भाव के प्रति श्रद्धा रखकर साधारण विषयों में एक होने में कभी पीछे न थे।

ब्रह्मानन्द केशवचन्द्र सेन सर्वदा इसीलिये चिन्तित और व्याकुल रहते थे कि पृथ्वी पर प्रेम और शान्ति स्थापित हो, प्रत्येक परिवार मङ्गलमय परमात्मा की पूजा-अर्चना कर पृथ्वी पर प्रेम और शान्ति लाया करे, यही आपके जीवन का प्रधान उद्देश्य था। इस उद्देश्य के साधन और पूर्ति में आपने सारा जीवन व्यतीत किया था। अपने पार्थिव जीवन के शेष

मुहूर्त तक आप इस महान् उद्देश्य की पूर्ति के लिये चेष्टा करते रहे। इसी उद्देश्य से आपने "भारताश्रम" स्थापित किया। यही भारताश्रम आपके सब कार्यों का केन्द्रस्थल हुआ। यह आश्रम एक बहुत बड़ा साधु अनुष्ठान था। १८७२ ई० के माघोत्सव के बाद यह आश्रम बेलघरिया के मैदान में स्थापित हुआ। यहाँ सभी इकट्ठे हो एक मन प्राण से पूजा उपासना, खान-पान करने लगे। सभी कार्य यथोचित रूप से विधि-पूर्वक होने लगा। इसके संलग्न एक स्त्री-विद्यालय था। इसमें आश्रमवासिनी स्त्रियाँ ही शिक्षा प्राप्त करती थीं। स्त्री-पुरुष का परस्पर व्यवहार, ज्ञान-धर्म-शिक्षा, आलोचना, पारिवारिक कार्य सब अति सुचारु रूप से सम्पादित होने लगे। केशवचन्द्र स्वयं स्त्रियों को धर्मशिक्षा देते थे। इस आश्रम को सब प्रकार से आदर्श बनाने के लिये आप प्राणपण चेष्टा और यत्न करने लगे। कुछ दिन के लिये आप सपरिवार इस आश्रम में रहकर आश्रम की सेवा करने लगे। फल यह हुआ कि थोड़े ही समय में आश्रम नर नारियों और बालक-बालिका से पूरा हो गया। देश-विदेश से भी ब्राह्मगण निश्चिन्त मन से अपने परिवार को इस आश्रम में शिक्षा और धर्मोन्नति के लिये भेजने लगे।

इस प्रकार जनसाधारण की धर्मोन्नति के लिये जब केशव उद्योग कर रहे थे, आपके कई विरोधी आपके इस महत् कार्य में बाधा-विघ्न उपस्थित करने में यत्नशील थे।

फिर विरोधियों ने आपसे क्षमा प्रार्थना की और महान् केशव ने इनलोगों को क्षमा कर दिया; परन्तु इसी समय

आशंका हुई। सब यह सोचने लगे कि ब्राह्म-धर्म क्या उदासीन धर्म है। चारों ओर नाना प्रकार की बातें उठने लगीं, पर आचार्य केशव इस प्रकार के प्रतिवादों पर दृष्टि न देकर अपना कार्य उत्साह और आग्रह के साथ करते ही गये। संन्यासी की नाईं आप अपना जीवन व्यतीत करते रहे। आपके आश्रम में जो जाते थे, उनका आप उचित रूप से सत्कार करते थे। आप अपनी रसोई खुद ही बनाकर खाते थे और अतिथियों को अति प्रेम तथा आदर के साथ खिलाते थे उनके साथ धर्म-प्रसङ्ग करते थे। आपकी रसोई अति स्वादिष्ठ और नाना प्रकार की खाद्य सामग्रियों से पूर्ण रहती थी। चार वर्षों तक आपने इस प्रकार जीवन व्यतीत किया था।

आप प्रचार के लिये जब देश-विदेश भी जाते थे तब भी इसी निर्दिष्ट नियम के अनुसार अपना जीवन यापन करते थे। आपका दृष्टान्त देखकर आपके दल के सहयात्री प्रचारकगण भी इसी प्रकार साधन-भजन करते थे। ब्राह्मसमाज में इस समय जिस प्रकार साधन-भजन में उत्साह और उद्योग देख पड़ता था, वैसा और कभी भी न देखा गया है। इस प्रकार साधन भजन द्वारा आचार्य केशव ने साधकों में और ब्राह्म-परिवार में योग, भक्ति और कर्म-ज्ञान की नीव डाली थी। इसी कारण उस समय के ब्राह्मों में अति सुन्दर धर्म-पिपासा और आकांक्षा की अभिवृद्धि हुई थी।

केशवचन्द्र ने अपने जीवन के आरम्भ काल में स्वाभाविक नियम के अनुसार वैराग्य धर्म का साधन किया था, पीछे जैसे-जैसे आप की वयस बढ़ने लगी, आप स्वाभाविक नियमों के

वशीभूत हो ज्ञान, नीति तथा भक्ति-योग का साधन कर अपने एवं जीवन द्वारा इस जगत् में मानव-जीवन का एक उच्च आदर्श दिखा गये हैं। आप स्वभाव का अति समादर करते थे, स्वभाव के इङ्गित को पालनकर आप अपने जीवन के सब कामों का सम्पादन करते थे। यही कारण है कि आपके जीवन में नव विधान का धर्म समन्वय विशेष रूप से प्रस्फुटित हुआ था। आपने वियोग और संयोग का मर्म भली भाँति समझा था। इसी उद्देश्य से आपने विभिन्न शाखा-धर्मों को अलग-अलग सिखाने की व्यवस्था की थी। आपके इस गूढ मर्म को बहुतों ने नहीं समझा था, इसी कारण वे, विशेष कर आपके विरोधीदल, कहा करते थे कि केशव की शिक्षा आंशिक है। पर आपके जीवन में वियोग और संयोग का मिलन अर्थात् विभिन्न धर्मों का मिलन अति सम्यक् रूप से प्रकाशित होता था। संयोग धर्म के प्रकाश होने के पहले आपने भली भाँति वियोग धर्म की शिक्षा की प्रयोजनता समझी थी। शेष में जब धर्मसमन्वय नव विधान का आविर्भाव हुआ, सबने आपके महत्व को समझा और जिन्होंने उस समय नहीं समझा था पीछे उनके अन्तर में महान् नव विधान का महत्व जगा और मत-भेद की ग्लानि दूर हुई तथा मिलन की माधुरी आई जिसका परिचय बहुतों ने दिया है।

केशव ने फिर एक "साधन-कानन" स्थापित किया। ग्रीष्मकाल में आप सपरिवार अपने बन्धुओं के साथ रहते थे और वनवासी ऋषि की नाईं यहाँ वास करते थे। वृक्ष के नीचे उपासना-कुटी में खाना बनाना और निकटवर्त्ती ग्रामों में घर-

घर हरिनाम कीर्त्तन करना आपलोगों का काम था। इसी कानन में आपने अपने सहसाधकों के साथ अधिक काल तक ध्यान चिन्ता का अभ्यास किया था। इस प्रकार गूढ भगवत्-चिन्ता, ध्यान-धारणा में नियुक्त रहकर भी आचार्य केशव सामाजिक कार्यों से विरत नहीं रहते थे। बीच-बीच में आप सामाजिक कार्यों के संपादन में आश्रम से बाहर आकर धर्म-शिक्षा और वक्तृता से लोगों को उपकृत किया करते थे। इसी समय आप ने अलबर्ट हाल के लिये अर्थ-संग्रह करने का उद्योग किया था। १८७६ ई० की २२वीं अप्रैल को अलबर्ट हाल की स्थापना हुई थी। थोड़े ही समय में आपने इसके लिये तीस हजार रुपये इकट्ठे किये। सब जातियों में भ्रातृभाव को जाग्रित करने के लिये आपने इस हाल की स्थापना की थी। इस हाल में जनसाधारण के लिये संवादपत्र, पुस्तकादि सञ्चित हैं, यहाँ साधारण हितकर विषयों में सभा वक्तृतादि भी होती हैं। अलबर्ट कालेज विद्यालय यहाँ ही है। यहाँ राजा राममोहनराय की एक प्रतिमूर्ति भी टँगी हुई है। इस प्रकार जनसमाज के विविध हितकर कार्यों में केशव सर्वदा लीन रहते थे। कौन कह सकता है कि आचार्य केशव केवल साधु ऋषि की नाईं जन समाज से अलग हो निरर्थक हरिनाम में अपना समय बिताते थे? आपके हरिनाम कीर्तन का अर्थ गृहस्थ धर्म में भगवान् की प्रतिष्ठा करनी थी। सांसारिक मानव-जीवन को भगवान् के साधन भजन द्वारा मुक्त करना आपका केवलमात्र उद्देश्य था। आपके निकट ब्राह्मधर्म का एक प्रति उच्च आदर्श था और मानव-समाज को

इसी उच्च आदर्श की ओर ले जाने के लिये आप आजन्म यत्न और उद्योग करते रहे। बराबर प्रतिदिन उपासना, साधन, भजन, कीर्तन और धर्म प्रसङ्ग के प्रभाव से आपने चारों ओर विशुद्ध मण्डल रच रक्खा था जहाँ केवल पवित्र वायु प्रवाहित होती थी। आपके साथी आपके साथ इसी प्रकार के जगत् में वास कर नित्य ब्रह्म-रस का पान करते थे। प्रत्येक के हृदय में ब्रह्मज्योति प्रकाशित होती रहती थी!

— —

कूचबिहार से विवाह-सम्बन्ध

यह पहले ही कहा गया है कि आचार्य केशवचन्द्र सेन सर्वदा स्वाभाविक नियमों के अनुकूल अपना जीवन-यापन करते थे। स्वभाव के वशीभूत हो आप सर्वदा परमेश्वर को अपने जीवन के प्रतिपल में स्पर्श और अनुभव करते थे। सर्वदा आपने अपने को भगवान् के आदेशानुसार चालित किया था। आपकी सर्वदा यही वासना और अभिलाषा थी कि ब्रह्म-वाणी सुनते-सुनते ब्रह्मधाम की ओर अग्रसर होते रहें। आप धर्म और संसार दोनों कार्यों में भगवान् के ऊपर पूर्ण भाव से विश्वास और निर्भर कर जीवन-यापन करते थे। भगवान् का इङ्गित आपके सभी कार्यों का परिचालक था।

इसी समय केशव के निकट कूचबिहार के महाराज के साथ आपकी कन्या के विवाह का प्रस्ताव उपस्थित हुआ। इस प्रस्ताव में आपने भगवान् के अभिप्राय का अनुभव किया और इसी विश्वास के अनुसार आप इसमें सहमत हुए थे। आपको यह प्रतीत हो गया था कि यदि इसमें अमत प्रकाशित करें तो आप भगवान् की इच्छा विरुद्ध काम करने के दायी होंगे, अतएव आपने परमेश्वर की इच्छा पालन करने में, आपकी जैसी प्रकृति थी, उद्यत हुए। इसके बाद विवाह की बात-चीत ठीक हुई। इसपर केशव ने निम्नलिखित कई प्रस्ताव किये—

(१) राजा ब्राह्म हैं अथवा एकेश्वरवादी, इसे वे लिखकर सूचना करेंगे।

(२) ब्राह्म-समाज-पद्धति अर्थात् अपौत्तलिक हिन्दू-विवाह-पद्धति के अनुसार विवाह होगा। (इसमें पौत्तलिकता दोष-विमुक्त स्थानीय आचार-व्यवहार रह सकता है।)

(३) पात्र-पात्री उपयुक्त वयःक्रम अनुसार विवाह करेंगे। यदि इतने समय तक अपेक्षा नहीं की जाय, तब अभी केवल वाग्दान ही होगा, पीछे महाराज के विलायत से लौटने पर विवाह होगा।

(४) विवाह-पद्धति मे ब्राह्मधर्म सम्बन्धी नियम प्रति-पालित होगा।

इस प्रस्ताव पर डिप्टी कमिश्नर ने लिखा था—"छोटे लाट साहब बालविवाह में सहमत नहीं हैं, महाराज ने स्वयं भी इसमें अनिच्छा प्रकाशित की है।"

इस कारण इस विषय में फिर कुछ बातचीत नहीं हुई। परन्तु तीन महीने के बाद फिर खबर आई कि छोटे लाट साहब इस विवाह में सहमत हुए हैं। इसके साथ-साथ यह भी खबर आई कि विवाह के बाद ही महाराज विलायत जायँगे और विलायत जाने के पहले इनका विवाह हो जाना अति आवश्यक है। विवाह केवल नाममात्र होगा, केवल वाग्दान होगा। विधि-पूर्वक अभी विवाह नहीं होगा। इस विषय में छोटे लाट साहब ने आचार्य केशव को फिर विवेचना करने के लिये अनुरोध किया। अतएव छठी मार्च को विवाह का दिन स्थिर हुआ। वर-कन्या का परस्पर आलाप-परिचय हुआ। आचार्य केशव ने दोनों के साथ कमल कुटीर में प्रार्थना की। इसके बाद महाराज अपने लोगों के साथ कूचबिहार

गये। आचार्य ने इनके साथ निम्न लिखित प्रस्ताव भेजे—(१) विवाह के पहले अथवा पीछे वर-कन्या के साथ किसी प्रकार का पौत्तलिक संस्रव नहीं रहेगा। (२) विवाह-मण्डप में मूर्त्ति, घट अथवा अग्नि नहीं रक्खी जायगी। (३) छपे हुए मन्त्र को छोड़कर दूसरा मन्त्र नहीं पढ़ा जायगा। (४) कोई मन्त्र छोड़ा अथवा बदला नहीं जायगा। इनके अलावा केशव ने अपनी कन्या के साथ कूचबिहार जाने के पहले तार दिया कि "धर्म-सम्बन्ध में तनिक भी हेर-फेर न होगा।" इसके उत्तर में खबर आई—"किसी प्रकार की आशङ्का करने की जरूरत नहीं है, पौत्तलिक अंश बाद देकर हिन्दू विवाह-पद्धति के अनुसार विवाह-कार्य होगा।" इस प्रकार आशा पाकर केशव विवाह के लिये उद्यत हुए थे; पर इसके बाद फिर खबर आई कि विवाह ब्राह्म पद्धति के अनुसार नहीं हो सकता। इस पर केशव कूचबिहार जाने में रुक गये, पर आपको बाध्य हो कर जाना पड़ा, क्योंकि आपने समझा था कि जब सरकार (Government) स्वयं इस बात में दिलचस्पी ले रही है तब किसी प्रकार का अत्याचार नहीं होगा। महाराज की दादी और इनके अनुचरवर्ग ने हिन्दू-विधि अनुसार विवाह की सब तैयारियाँ कर रक्खी थीं। इस प्रकार का व्यवहार प्रतिज्ञा और अङ्गीकार के विरुद्ध था और कई जनों की दुष्टता और कुमन्त्रणा के कारण विवाह के पहले से निर्द्धारित अनुष्ठान की पवित्रता विनष्ट हो गई और जब केशव अपनी कन्या और बन्धुबान्धवों के साथ कूचबिहार पहुँचे तब आपके निकट नाना प्रकार के नये-नये विवाह अनुष्ठान के प्रस्ताव पहुँचने लगे। राज-परिवार के

र्मचारियों ने कहा—"केशव बाबू विवाह-मण्डप में नहीं
ा सकेंगे। उपवीतधारी ब्राह्मण को छोड़कर कोई मन्त्र
हीं पढ़ सकेगा। ब्रह्मोपासना नहीं हो सकेगी। वरकन्या विवाह
ा अङ्गीकार-वाक्य नहीं कहेंगे और दोनों को होम करना
ोगा।" विवाह के पहले इन बातों को सुनकर केशव अति
चिन्तित हुए। इसके पहले आपने अपनी कन्या को कलकत्ते
में अपने घर में धर्मपूर्वक महाराज के हाथ में समर्पित किया
है। यह बन्धन किसी प्रकार छिन्न नहीं हो सकता
और इधर लौकिक भाव से विवाह अनुष्ठान में इस प्रकार की
बाधा उपस्थित हुई। आपके निकट एक अति घोर समस्या
उपस्थित हुई। इस विषय में अति तर्क-वितर्क हुआ, पर किसी
प्रकार मीमांसा नहीं हो सकी। वीर केशव जो सभी प्रकार के
बाधा-विघ्नों को अतिक्रम करने में अटल रहते थे, इस समय
असहाय अवश हो अति मलिन और विषण्ण हो गये। इस
घटना से आपकी सब बुद्धि और तेज-प्रभा घोर विपद् के
अन्धकार में गायब हो गई। आप और आपके सहयात्री सभी
प्रायः ज्ञानशून्य हो गये।

इस विवाह का प्रस्ताव सुनकर प्रायः सभी लोग केशव के
विरुद्ध हो गये थे। नाना प्रकार की बातें सभी ओर से हो रही
थीं। संवादपत्र में भी केशव की निन्दा और दुर्नाम जोर-
शोर से लिखा जा रहा था। देश-विदेश से इस विषय में
अति घोर प्रतिवाद पहुँच रहा था। बालक, युवक-वृद्ध प्राय. सभी
लोग इस कारण केशव के घोर विरोधी और विपक्षी हो चले थे।
नाना प्रकार की सभाओं में भी प्रत्यक्ष रूप से इसको लेकर

पहले उसपर आक्रमण करता। दूसरे के लिये जो दोष है वह केशव के लिये कर्त्तव्य है, इसका क्या मतलब हो सकता है। ऐसी अवस्था में दोष-गुण केवल अभिप्राय के ऊपर निर्भर करता है, सर्वदा कार्य के ऊपर नहीं।" ऐसी अवस्था में सद्भाव के पोषण करनेवाले केशव सम्पूर्ण भाव से अवश और लाचार थे। ईश्वर के आदेशानुयायी कार्य करनेवाले केशव ने जिस समय विवाह में सम्मति दी थी उस समय आपने कभी भी ऐसा नहीं सोचा था कि आपको इस प्रकार की परीक्षा में पड़ना होगा। इस विवाह में आपने केवल मङ्गलमय भगवान् की इच्छा समझी थी। आपने समझा था कि इस विवाह के द्वारा एक राज्य में भगवान् अपने यथार्थ मङ्गलमय विधान का विस्तार करेंगे, सभी प्रकार के अन्धकार कुसंस्कार को दूर कर अपना यथार्थ धर्म फैलावेंगे। आपने यही महत्‌भाव को समझा था। बहुतों ने आपपर इस प्रकार अपवाद लगाया है कि केशव राज्य-लोभ के लिये विवाह में सहमत हुए थे। यदि आपका लोभ था तो कूच-बिहार में भगवान्-राज्य की प्रतिष्ठा का लोभ था। इस आकांक्षा के अतिरिक्त और कोई भी दूसरी आकांक्षा न थी। यदि किसी प्रकार का आपका सांसारिक उद्देश्य साधन इस विवाह से रहता तो आप वैरागी-सा जीवन यापन कभी नहीं करते। भगवान् के ऊपर आशा और विश्वास रखकर आपने सर्वदा विवाह के पहले और विवाह के पीछे अनेक कष्ट असुविधाओं के भीतर अपना जीवन व्यतीत किया है। अभाव में पड़कर आपने अपने धर्मबन्धुओं के निकट याचना की है, पर कूचबिहार राज्य-भण्डार के ऊपर कभी तनिक मात्र भी निर्भर नहीं

किया था। आपने जब कभी यात्रा की है, सर्वदा तीसरे दर्जे में यात्रा की है। यहाँ तक कि जब कभी प्रचार-कार्य में आर उस ओर बाहर जाते थे तब राजा के नौकर चाकर के साथ ही तीसरे दर्जे में बराबर असंकोच और प्रसन्न भाव से यात्रा करते देखे जाते थे। आपका जीवन ही साक्षी है कि आपने धन-लोभ से धर्म को कभी नहीं छोड़ा था। सरकार के जरिये विवाह की बातचीत स्थिर हुई थी, इसी कारण केशव को पूरा विश्वास था कि इस विषय में किसी प्रकार की बाधा या विघ्न न होगा। इसी विश्वास पर केशव इस विवाह में सहमत हुए थे और अपनी कन्या, अपने घर मे परमेश्वर को प्रार्थना कर, भगवान् के सम्मुख वर को समर्पित की थी। पीछे विवाह पद्धति और अनुष्ठान में राज-परिवार और राज-कर्मचारी हेरफेर करेंगे और आप इस प्रकार प्रवञ्चित और अपमानित होंगे ऐसी धारणा आपको स्वप्न में भी न थी।

इस विवाह में जिनलोगों ने प्रतिवाद किया था उनलोगों ने केशव पर यह दोष भी लगाया कि आपने साढ़े तेरह वर्ष की कन्या और साढ़े पन्द्रह वर्ष के वर के विवाह में सम्मति देकर धन-लोभ से बाल-विवाह का भी समर्थन किया है; परन्तु यहाँ पर भी केशव लाचार थे। आपने कभी इस बात का समर्थन नहीं किया था। आपने यही स्थिर किया था कि बातचीत पक्की होने पर विवाह वर कन्या के उचित वयस प्राप्त होने पर होगा। इसी विश्वास और भरोसे पर आप इस विषय में अग्रसर हुए थे; पर मनुष्य के दोष और अपूर्णता के कारण नाना प्रकार के विघ्नों से इसकी सुन्दरता विनष्ट हुई।

आचार्य केशव जब विवाह के बाद कूचविहार से कलकत्ते वापस आये तब यहाँ आपने एक दूसरी परीक्षा सम्मुख में उपस्थित देखी। कलकत्ते में आपके विरोधी दल सम्पूर्ण रूप से आप के विरुद्ध हो गये। चारों ओर से प्रकाश्य भाव से आपकी निन्दा और अपवाद होने लगे। सब ने प्रतिज्ञा की कि आपको ब्रह्म-मन्दिर में उपासना नहीं करने देंगे, मन्दिर में आपका किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रहेगा, मन्दिर की ट्रस्टी नियुक्त की जायगी। विरोधियों का इस प्रकार व्यवहार देख केशव आचार्य का पद छोड़ देने के लिये तैयार हुए। इस विषय में ब्रह्म-मन्दिर में एक सभा हुई। इस सभा में केशव ने प्रकाश्यभाव से सब को लिखकर जता दिया कि आप आचार्य का पद छोड़ने के लिये तैयार थे; पर इसपर भी विपक्षियों की क्रोधाग्नि शान्त न हुई। छोटे-बड़े सभी कोई प्रकाश्य भाव से केशव को अंटसट कहने लगे। मन्दिर में बहुत उत्पात और कोलाहल होने लगा। विपक्षियों ने अपने में से एक को सभापति ठीक किया। शान्तभाव से किसी प्रकार के कार्य होने की सम्भावना नहीं देख केशव अपने बन्धु प्रचारकदल के साथ बगल की एक दूसरी कोठरी में चले गये। विवाह के पहले ही से एक ब्राह्म केशव के विरुद्ध आन्दोलन कर रहे थे। विवाह के बाद इस दल को और भी आपकी निन्दा और अपमान करने का अवसर मिला। सभी कोई विवाह-सम्बन्ध में केशव की असहाय अवस्था को भूल गये और आपपर नाना प्रकार के अपवाद लगाने लगे, पर केशव विश्वास-पूर्वक अटल चित्त से अपना कार्य करते गये।

शेष में फल यह हुआ कि भारतवर्षीय ब्राह्मसमाज के कई

सभ्य स्वतन्त्र हो कर अलग हो गये और "साधारण ब्राह्म समाज" के नाम का एक दल बना। इनलोगों ने पहले ब्राह्म मन्दिर अधिकार करने की चेष्टा की थी, पर इस कार्य में ये लोग सफल नहीं हो सके। तोभी ये सब मन्दिर आक्रमण करने के लिये और मन्दिर से केशव को निकालकर खास-उपासना करने के लिये नाना प्रकार के उपाय करने लगे। उस समय केशव के पक्ष में भी बहुत-से लोग थे।

केशव के विरोधी दल नाना प्रकार के उपद्रव करने लगे और समाज-मन्दिर में बहुत गोलमाल मचाने लगे। यहाँ तक कि शान्ति स्थापन के लिये पुलिस की सहायता लेनी पड़ी थी। पीछे सब शान्त हुए; पर इसके पहले ही ये लोग एक अपना स्वतन्त्र समाज सङ्गठित कर चुके थे। जब केशव को यह बात मालूम हुई तब वे बहुत दुःखित हुए और अपने सहकारी सम्पादक प्रतापचन्द्र मजुमदार के द्वारा आपने इस प्रकार एक पत्र लिखा—"आपलोग व्यक्ति विशेष के प्रति विरक्त होकर क्यों स्वतन्त्र समाज का संगठन करेंगे? हमलोगों के साथ आपलोगों के मत में तो किसी प्रकार प्रभेद नहीं है। यदि कार्यप्रणाली के परिवर्त्तन अथवा संशोधन की आवश्यकता हो तो यथारीति सभा कर नियम के साथ उसे सम्पादित कीजिये। सभा करने का समय स्थिर करने का अधिकार हमलोगों को है। उत्तेजना के समय इसमें कोई फल नहीं होगा, इसी लिये देर की जाती है। इस कारण मण्डली मत तोड़िये। जिस किसी विषय में प्रस्ताव हो, उसे आपलोग सभा में आकर कीजिये। भारतवर्षीय ब्राह्म समाज प्रतिष्ठित नियमानुसार हम सबके साथ एक होकर काम

करने में पीछे नहीं हैं।" पर विरोधियों ने इन सब बातों पर तनिक भी ध्यान नहीं दिया।

विपत्ती ब्राह्मदल ने १८७८ ई० में प्रकाश्य रूप से एक स्वतन्त्र समाज स्थापित किया। दोनों दलों में परस्पर विरोध भाव बढ़ता ही गया। विरोधी दल के लोगों ने दूसरे दल के लोगों से सब प्रकार का सम्बन्ध छोड़ दिया। यहाँ तक कि परस्पर बातचीत, भेंट-मुलाकात, खाना-पीना तक छोड़ दिया। सब कार्यों को स्वतन्त्र भाव से करेंगे, इनलोगों ने ऐसी ही प्रतिज्ञा की।

इस नवीन समाज में अङ्गरेजी-बङ्गला-पत्रिका प्रचार, प्रचारक दल सङ्गठन, मासिक और साप्ताहिक उपासना, वार्षिक उत्सव सभी पूरे उत्साह और उद्योग के साथ होने लगे। इस प्रकार नवीन उत्साह और उद्योग से बहुत-से अच्छे-अच्छे कार्य हो गये; पर दु ख की बात यही थी कि केशवचन्द्र जो कुछ कार्य करते थे उसी में इस नवीन दल के लोग बाधा-विघ्न उपस्थित करते थे। इसे देख केशव अति दु.खित हुए। बहुत-से ब्राह्म बन्धु प्रकाश्य रूप से नवीन दल के साथ मिले और बहुत से गुप्त भाव से इनके साथ सहानुभूति रखने लगे; परन्तु यथार्थ भक्त साधक ब्राह्म मण्डल प्राय. केशव के साथ ही साधन-भजन करते रहे।

केशव सर्वदा यही भाव पोषण करते रहे कि ब्राह्म समाज स्वाधीनता के ऊपर स्थापित है अतएव इसमें दलबंदी होना सम्भव और अवश्यम्भावी है। पर परस्पर का विरुद्ध साम्प्रदायिकभाव से सङ्गठन विद्वेष और शत्रुता का परिचय देता है। सत्य ब्राह्म धर्म प्रेम का धर्म है, इस धर्म में साम्प्रदायिकता का भाव पाप है।

यदि व्यक्तिगत भाव से क्रोध और विद्वेष के कारण साम्प्रदायिकता प्रकाशित हो तो क्रोध के बदले प्रेम और दया के भाव से यह पाप स्वरूप साम्प्रदायिकता दूरीभूत होगी। फिर भी आपको इस बात की पूरी आशा थी कि भिन्न दल होने पर भी सार्वभौम ब्राह्मधर्म के प्रभाव से भिन्न दल अन्त में सम्मिलित होंगे और जिन्होंने यथार्थ ब्राह्मधर्म की शीतल छाया में आश्रय लिया है वे भिन्न दलभुक्त होने पर भी एक ब्राह्म मण्डली में भुक्त हैं। इस प्रकार महत भाव का पोषण करते हुए केशव बाधा-विघ्नों के भीतर अपना कार्य ब्रह्मतेज के साथ करते गये। आप के विपक्ष के लोगों ने आपके गूढ तत्त्व और भाव को उस समय तो क्रोध और द्वेष में पड़कर नहीं समझा था, पर पीछे वे आपके गूढ़ भावों को समझने के योग्य हुए थे। वर्तमान काल में तो साधारण समाज के सभ्यों में कोई भी ऐसा नहीं है जो अपने पूर्वजों के भावों को पोषण करते हैं। केशव के अनुचर भक्त शिक्षार्थी शिष्य विजयकृष्ण गोस्वामी विरोधी दल के एक प्रधान नेता थे, पर पीछे तो इन्होंने ब्राह्मसमाज को त्याग किया था। जो हो, विरोधी दल ने अपना स्वतन्त्र समाज साधारण ब्राह्मसमाज के नाम से स्थापित किया। अब आदि और साधारण ब्राह्म समाज दोनों ही प्रायः एक होकर केशव के विरुद्ध कार्य करने लगे। बहुत-से बड़े-बड़े धनवान् व्यक्ति इसमें सम्मिलित थे। अतएव रुपये-पैसे का अभाव तनिक भी नहीं था। साधारण समाज का उपासना-मन्दिर भी तैयार हो गया। धन और जन के बल से केशव के विरुद्ध घोर आन्दोलन भी चलने लगा। एक ओर तो इस प्रकार की अवस्था थी और दूसरी ओर

धनहीन केशव अपने कतिपय विश्वासी बन्धुओं के साथ घोर परीक्षा में उपस्थित थे। इस प्रकार की परीक्षा और नाना प्रकार के मिथ्या अपवाद से आप अति दुःखित और व्यथित हुए। आपका शरीर भी दुर्बल हो गया और पीड़ा से ग्रस्त हो कर कई मास शय्याशायी रहे। इस अवस्था में भी आपके धर्म तेज और उत्साह में शिथिलता नहीं पहुँची, बल्कि यह और भी दूना होता गया।

प्रेममय भगवान् इस प्रकार की लीला इस सृष्टि में सर्वदा दिखाया करते हैं। अपने भक्तों को वे सर्वदा घोर परीक्षा में डालकर अपने प्रति उनकी भक्ति, श्रद्धा और विश्वास को सर्वदा दृढ़ कर रखते हैं कि जिसमें यह सांसारिक कोलाहल से क्षीण और मलिन न हो जाय। इस प्रकार की परीक्षा में श्रीचैतन्यदेव ने सर्वत्यागी हो केवल प्रेममयी जननी के प्रेम और भक्ति से विह्वल हो उनके श्रीकमलचरण में आश्रय पाया था। ब्रह्मानन्द केशव इस प्रकार घोर परीक्षा में और कहीं किसी प्रकार की सहायता और आश्रय की वासना छोड़ परमात्मा के निकट और भी भक्ति और विश्वास के साथ पहुँचे। इस प्रकार परमात्मा के श्रीचरण में अपने को समर्पितकर ब्रह्मानन्द केशव यथार्थ ब्रह्मानन्द के अधिकारी हुए। आपने इसी चरण में नवीन उत्साह और उद्यम पाया और इसके अन्तर से नव जीवन और नव विधान का आविर्भाव हुआ।

जब केशव अपनी शिरः-पीड़ा से आरोग्य हुए तब आपने अति उत्साह और आनन्द के साथ भगवान् के नये-नये कार्यों में सम्मिलित हुए। अपने सहसाधक-साधिकाओं को उपासना साधन

भजन द्वारा भगवान की ओर ले जाने के लिये पूर्ण यत्नशील हुए। नये-नये सत्कार्यों और अनुष्ठानों का आरम्भ हुआ। मण्डली में जागरण और उत्साह का संचार हुआ। इसी समय ३० के शरद् मास की पूर्णमासी के दिन आप अपने दल के साथ हरिनाम सङ्कीर्तन करते हुए स्टीमर पर गङ्गानदी की शोभा से मोहित हो दक्षिणेश्वर घाट में उपस्थित हुए। यहाँ आपने उपासना की और रामकृष्ण परमहंस के साथ प्रेम-मिलन हुआ। इस अवसर पर ब्राह्म और हिन्दू सब ने एक ही भगवान् का भजन किया था। इस उपलक्ष्य में केशव ने गङ्गा नदी की महिमा का वर्णन करते हुए वक्तृता और प्रार्थना की थी। इसे सुन विपक्षी दल ने आपकी और भी निन्दा की और कहा कि केशव बाबू अब गङ्गा की पूजा भी करने लगे हैं। इस प्रकार शत्रु दल आपके विरुद्ध भाँति-भाँति के अपवाद लगा रहे थे।

केशव के अन्तर में एक नये प्रकार का अविर्भाव आरम्भ हुआ। आप सृष्टि के अन्तर मे सौन्दर्य और आनन्द अनुभव करने लगे। इस विश्व ब्रह्माण्ड में जितने कल्याणप्रद पदार्थ और भाव हैं उन सब में आपने स्पष्ट रूप से भगवान् का आविर्भाव देखा और इसी भाव से आप भगवान् की पूजा और प्रार्थना करने लगे। आपके अन्तर में अति गूढ़ और गम्भीर भाव का विकास होने लगा। वक्तृता, कथावार्ता और आलोचना से आप महान् भक्त प्रतीत होने लगे। इन महान् भावों से उत्तेजित हो आप मानव समाज को सब प्रकार के कर्त्तव्य कार्यों में ले जाने के लिये नाना विध उपाय करने लगे।

छोटी-छोटी पुस्तिकाओं में इन भावों को छपवाकर लोगों में वितरण करने लगे।

आपके मत से पाप-वासना ही मनुष्य को पापी करती है अतएव पाप-कार्य से नहीं, बल्कि पाप की प्रवृत्ति से मनुष्य पापी होता है। यथार्थ अनुताप मनुष्य को स्वर्ग का आनन्द देता है। परमेश्वर के ऊपर भरोसा करना और भविष्य के लिये चिन्ता न करना, परमेश्वर ही को आप अपना मत, विश्वास, धर्म समाज, इहलोक, परलोक, स्वर्ग, अन्न, वस्त्र, धन समझने लगे और इसी भाव से आपका विश्वास प्रति पल बढ़ता ही गया। इसी विश्वास के बल से आप ईश्वर को सर्वत्र देखते थे और अनुभव करते थे कि विश्व के प्रत्येक पदार्थ में भगवान् अनुप्रविष्ट हैं। आपका यही यथार्थ विश्वास अन्न, जल, ज्ञान, विज्ञान आनन्द के रूप में परिणत था। इसका परिचय आपने अपने सारे जीवन में आचार-व्यवहार कार्य तथा कथा-वार्त्ता द्वारा ज्वलन्त रूप से दिया है। इसी विश्वास से अनुप्राणित हो आपने अपना सर्वस्व स्त्री, पुत्र, पार्थिव सम्पत्ति ब्रह्म के श्रीचरण में समर्पित किया था। इसी कारण आपने अपने को सम्पूर्ण रूप से भारत की सेवा में उत्सर्ग किया था। भारत की सेवा छोड़ आप और दूसरा कोई काम नहीं जानते थे। इस विषय में आप केवल एक परमात्मा को ही अपना गुरु समझते थे। आपने स्पष्ट रूप से कहा है—"मनुष्य का धर्म, मनुष्य का परामर्श मैं नहीं लूँगा; परन्तु जो ईश्वर के विश्वासी हैं, मैं उन्हींकी सेवा करूँगा।"

इस प्रकार के महान् भाव से उत्तेजित हो केशव ने सामाजिक संस्कार के लिये नाना प्रकार के सदनुष्ठान का आरम्भ किया। नारी-

जाति को जातीय स्वभावानुयायी शिक्षा-प्रणाली द्वारा ज्ञान, धर्म और गृहस्थी के काम में शिक्षा देने के लिये आपने "आर्य नारी-समाज" स्थापित किया। १८८० ई० में आपने विशेष-विशेष कामों के लिये एक दल प्रचारक स्थापित किया। इस दल में प्रतापचन्द्र मजुमदार, गौरगोविन्द राय, अघोरनाथगुप्त, गिरीशचन्द्र सेन, त्रैलोक्यनाथ सान्याल विधिपूर्वक नियुक्त हुए थे।

प्रतापचन्द्र मजुमदार क्रिश्चियन-धर्मशास्त्र, गौरगोविन्दराय हिन्दू-शास्त्र, अघोरनाथगुप्त बौद्ध-शास्त्र, गिरीशचन्द्रसेन और त्रैलोक्यनाथ सान्याल सङ्गीत-शास्त्र की चर्चा करते थे। इस प्रकार भक्त केशव और आपके बन्धु नाना धर्मशास्त्रों का अध्ययन कर सबों से मूल सार भाव ग्रहण कर अन्त में नव विधान का भाव प्रचार करने में व्रती हुए। नाना स्थानों में आपलोग इसी भाव का प्रचार करने लगे। आपलोग जहाँ-जहाँ गये, वहाँ-वहाँ अपने जीवन द्वारा ब्राह्मधर्म का सार जीवन्त भाव सबके अन्तर में अङ्कित करने लगे। इस प्रकार इस समय देश में चारो ओर यथार्थ धर्म भाव का जागरण हुआ। इसके अलावा ब्राह्म विद्यालय में उपदेश, युवकों को योग-शिक्षा, भारत-संस्कार सभा की उन्नति साधन, इत्यादि नाना विध हितकर कार्य भी आपलोग अक्लान्त भाव से करते थे। केशव और आपके दल के प्रभाव से कलकत्ते में धर्मभाव का एक नवीन दृश्य देख पड़ने लगा। आपकी विज्ञान, युक्ति और धर्मभाव से परिपूर्ण वक्तृता सुनने के लिये बड़ी चाह और आग्रह के साथ हजार-हजार लोग एकट्ठे होने लगे। जो लोग पहले केवल ठट्ठा और उपहास करते थे वे

भी आपकी सारगर्भ वक्तृता सुनने के लिये व्याकुल और उत्कण्ठित हुए। सङ्गीत और सङ्कीर्तन दल ने मधुर हरिनाम की ध्वनि से लोगों को सरस और विह्वल कर दिया। केशव केवल एक धर्म-शास्त्र अथवा एक सम्प्रदाय में आवद्ध नहीं थे। आप और आपके बन्धुगण सभी धर्मों की आलोचना और गवेषणा करते थे और सभी धर्मों का सार भाव लोगों के निकट निवेदित कर अपने दल से सङ्कीर्णता और साम्प्रदायिकता के भाव को दूर कर सबको अपनी उदारता से चकित और मोहित कर दिया था। इसी उदारता का प्रभाव है कि आज-कल प्राय. सभी धर्मों एव सम्प्रदायों के लोग एक दूसरे को सद्भाव और सहानुभूति की दृष्टि से देखते हैं। आज-कल वेदान्त और ब्रह्मज्ञान के पक्षपाती आदि समाज तत्वबोधिनी में गीता, भागवत, चैतन्य, चरितामृत और पुराण के श्लोक प्रकाशित कर हरि-भक्ति साधन में उत्साह देते हैं, कृश्चियन धर्म प्रचारक हिन्दूपुराणों से ध्रुव, प्रह्लाद निताइ गौर का दृष्टान्त देकर धर्म प्रचार करते हैं और भारतवर्ष के आचार-व्यवहार को अपने धर्म-प्रचार में समर्थन करते हैं, यहाँ तक कि मुसलमान प्रचारक गण भी हिन्दूशास्त्र से दृष्टान्त दिया करते हैं। ऐसी उदारता की नींव केशवचन्द्र ही ने दी थी। पहले-पहल आपमें इस प्रकार का भाव देखकर जो सब ब्राह्मगण आपका उपहास और निन्दा करते थे और आपके विरुद्ध नाना प्रकार की समालोचना करते थे अर्थात् कोई कहते थे कि केशव हिन्दू हो गये, कोई कहते थे कि ईसाई हो गये, कोई कहते थे मुसलमान हो गये, और कोई कहते थे कि

वैष्णव हो गये हैं, पर आपके असल मर्म को किसी ने नहीं समझा था, वे सब भी केशव की प्रणाली का अवलम्बन कर जीवन में साधन भजन करने लगे और कर रहे हैं। जिसे कुसंस्कार और भ्रम समझा था उसे वे अपने जीवन में पालन करने लगे और कर रहे हैं। केशव ने यथार्थ भली भाँति ब्राह्मधर्म का मूल तत्त्व समझा था और इसी मूल तत्व के ऊपर आप सर्वदा आदि से अन्त तक अटल भाव से स्थिर रहे। नाना प्रकार की घोर परीक्षा और बाधा-विघ्न आपके सम्मुख उपस्थित हुए थे, पर आप केवल मात्र भगवान् के ऊपर विश्वास और भरोसा कर स्थिर रहे। इसी कारण आपकी जीत हुई और आज आपके विद्वेषी भी आपका यश और गुणगान करके आपके प्रेरित पथ का अवलम्बन कर रहे हैं।

नवविधान

केशवचन्द्र सेन भगवान् के आदेश और उनके विधान पर सम्पूर्ण रूप से विश्वास करते थे और इसी विश्वास के ऊपर आपने अपना जीवन सङ्गठित किया था। आप ब्राह्म धर्म को ईश्वर-प्रेरित एक विधान समझते थे। आपको यह पूरा विश्वास था कि भगवान् मानव-समाज को उद्धार करने और उसके कल्याण और मङ्गल के लिये नित्य नूतन रूप से अपने को प्रकाशित करते हैं। भगवान् के राज्य में कलह-विवाद नहीं है, सभी नर-नारी एक प्रेम की डोरी में बँधे रहकर अपने जीवन का उद्देश्य पूरा करने के लिये इस पृथ्वी पर भेजे गये हैं। अतएव इस मङ्गल विधान में कहीं भी विरोध नहीं हो सकता है। यह महान् भाव केशव के अन्तर में आविर्भूत हुआ था। आपको पूरा प्रतीत हो गया था कि ब्राह्मधर्म का आविर्भाव भगवान् का एक विधान है। वर्तमान समय में मानव समाज के अभाव दूर करने के लिये सभी नर-नारियों को एककर भगवान ने इस धर्म का आविर्भाव किया है। सभी धर्म-शास्त्रों में ईश्वर का मर्म निहित है। अतएव आपने सब धर्मों का अध्ययन कर उनका सामञ्जस्य समझा।

आपने १८०१ शकाब्दि के १२ माघ में ब्राह्मधर्म का नाम 'नवविधान' दिया। आप जिस धर्म को अबतक ब्राह्म धर्म कहते थे उसे अब आपने मानव समाज के परित्राण के लिये

भगवान् का एक नवीन विधान समझा। ब्राह्म समाज किस प्रकार भारतवर्ष के उस समय के घोर अन्धकार में सङ्गठित हुआ था और किस प्रकार भगवान् की अलौकिक कृपा इसके भीतर से प्रकाशित हुई थी इसे आपने केवल एकमात्र परमात्मा का अद्भुत विधान समझा था। बहुत से लोग नवविधान नाम के विरुद्ध थे और केशव ने इस प्रकार ब्राह्म समाज का एक नूतन नाम दिया, इस कारण वे लोग और भी आन्दोलन करने लगे; पर अन्त में वे लोग भी इसे समादर करने लगे और इसका आश्रय लेने लगे।

पहले ब्राह्मधर्म के भीतर प्रत्यादेश, विशेप कृपा, साधु-भक्ति, योग, ध्यान और संयम की साधना इस प्रकार की नहीं थी जिस प्रकार केशव भगवान् का आदेश सुन साधन करने लगे थे। आपने ब्राह्मधर्म के भीतर अपनी साधना के वल से भगवान् का एक नूतन दृश्य प्राप्त किया, अतएव आपने इस नूतन भाव का नाम नवविधान घोषित किया। आपकी यही धारणा थी कि जिस धर्म में विधाता की लीला नहीं देखी जाती है, जिसमें ईश्वर के साथ मानव का योग नहीं है—जिस धर्म से मानव भगवान् के नित्य नूतन भाव को नहीं देख सकते हैं—उस धर्म से मनुष्य यथार्थ आनन्द और मुक्ति नहीं पा सकते हैं।

इस भाव का आविर्भाव केशव के अन्तर में पहले ही हुआ था और इस विपय की आप कथावार्ता-वक्तृताओं में आलोचना किया करते थे। आपने इसी कारण बहुत समय बहुत स्थलों में ब्राह्मधर्म और नवविधान को एक ही कहकर वर्णन किया है। सारे ब्राह्मसमाज और इसके अन्तर्गत सब

नर-नारियों को आपने नवविधान के भीतर स्वीकार किया था। आपने कहा है—"ईश्वर के विशेष अभिप्राय साधन करने के लिये विशेष विधान भेजा जाता है। भ्रान्त लोग कहते हैं कि जो विधान के आश्रित नहीं हैं वे नरक जायँगे। वे लोग समझते हैं कि केवल विधान-भुक्त कुछ लोग ही वैकुण्ठ जायँगे। पृथ्वी के बाकी लोग ईश्वर की करुणा से वञ्चित हैं। यह बात झूठ है।"

कूचबिहार के आन्दोलन में बहुत-से लोग केशव के विरोधी हो गये थे, पर नवविधान धर्म-प्रचार के बाद एक नूतन उत्साह और उद्यम देख पड़ा और आपके दल में उत्साह के साथ बहुत-से लोग आये। सभी भक्ति-भाव से गद्गद हो गये। केशव का गभीर भक्तिभाव नामसंकीर्तन और नगरसंकीर्तन में परिणत हुआ। दल के दल लोग नगरसंकीर्तन में योग देने लगे। सारा कलकत्ता नगरसंकीर्तन से मुखरित हो उठा। केशव ने जो भारतवर्षीय ब्राह्मसमाज स्थापित किया था उसका फल-फूल इस समय दिखाई पड़ने लगा। मानों नवविधान की घोषणा के साथ-साथ समाज ने एक नूतन ही आकार धारण किया—मानों नवविधान के भीतर से भारत में स्वर्ग की ज्योति रश्मि फैलने लगी। महाप्रेम, महायोग, गभीर भक्ति और ज्ञान भाव सब ब्रह्म-समाज की ओर आकर्षित करने लगा और थोड़े ही समय में नवविधान की वार्ता भारत में चारों ओर फैल गई। मनुष्य के साथ ईश्वर का प्रत्यक्ष व्यवहार है, यह जानकर भक्तगण इस रसका आस्वादन करने लगे और अत्यन्त उत्साह के साथ इस भाव का प्रचार करने के लिये कटिबद्ध हुए। उनके

उत्साह और उद्यम के सम्मुख सभी प्रकार के बाधा-विघ्न लुप्त हो गये। इस उत्साह के सम्मुख नदी, नाला, पहाड़ और दूरत्व सब प्रकार के विघ्न अदृश्य हो गये।

इस महान् भाव के द्वारा महात्मा केशव ने जगत् को एक अति अलौकिक सम्पत्ति दी है। इस भाव में द्वेष, हिंसा, भेद-विभेद नहीं हैं। इसके द्वारा सभी को अपनाना है। पुरातन प्रचलित ब्राह्मधर्म और ब्राह्मसमाज में जो मानवीय भाव था उसे ऐश्वरिक भाव से सुशोभित करना होगा और सभी प्रकार के दूषित भावों को दूर कर इसे परम पवित्र करना होगा, ब्राह्मधर्म के प्रचारक, ब्राह्मसमाज और ब्राह्म परिवार सभी ईश्वर द्वारा चालित होंगे, भगवान् के आदेश के अनुसार उनका सङ्गठन होगा, यही केशव का एकमात्र साधन हुआ। इसी भाव को अति स्पष्ट रूप से जगत् में स्थापित करने के लिये केशव ने नाना प्रकार के अनुष्ठान सङ्गठित किये। आपको इन अनुष्ठानों के कारण भी नाना प्रकार के अपवाद सहने पड़े थे।

नवविधान के साधन के लिये अपने जीवन के साथ साधु जीवन को एकीभूत करने, और इसकी पूर्ति के लिये भक्तवत्सल भगवान् के निकट सर्वदा प्रार्थना करने की प्रयोजनीयता के ऊपर आपने विशेष मनोयोग दिया था। सक्रेटिस, मूसा, शाक्य, गौराङ्ग, ईसा, महम्मद सारे आर्य ऋषिगण, प्राचीन और आधुनिक दार्शनिक और वैज्ञानिक पण्डितगण तथा चिन्ताशील ज्ञानी दयालु व्यक्ति और भक्तों को ग्रहण करना और उनको अपने जीवन में एकीभूत करना नवविधान का प्रधान उद्देश्य है। जिस प्रकार पुण्यसञ्चय करने के निमित्त लोग तीर्थयात्रा,

करते हैं उसी प्रकार जीवन में भगवान् की कृपा और प्रसाद लाभ करने के लिये प्रत्येक मानव को अपने जीवन में साधु-महात्माओं का आयत्त और प्रतिष्ठा करना उचित है इसीसे मानव-आत्मा का कल्याण और श्रीवृद्धि होती है। नवविधान किसी को पृथक् नहीं करता है, सभी के अन्तर में भगवान् का आविर्भाव एवं प्रकाश देख उनको ग्रहण करता है। नवविधान के मत के अनुसार महापुरुषों के साथ यही आध्यात्मिक योग है। इसी आध्यात्मिक योग-बल से मानव समाज सारी पृथ्वी को अपनाने के योग्य हो सकता है और स्वभावतः से सबको भ्रातृभाव से ग्रहण कर सकता है। इसी आध्यात्मिक योग-बल से पहले के प्रचलित सभी प्रधान-प्रधान धर्म-अनुष्ठानों के प्रति श्रद्धा और भक्ति का सञ्चार होता है और मानव-समाज से परस्पर हिंसा, द्वेष एवं घृणा का भाव दूर हो सकता है।

नवविधान के इस महत् भाव को सभी भली भाँति नहीं समझ सके और इस कारण केशव के प्रति नाना प्रकार के आक्षेप करने लगे। किसी ने कहा कि केशव ब्राह्म समाज में मुसलमानी भाव ला रहे हैं, किसीने कहा कि आप ब्राह्मसमाज को बौद्ध समाज बना रहे हैं, किसी ने कहा कि आप ब्राह्मधर्म को ईसाई धर्म कर रहे हैं और किसी ने कहा कि ब्राह्मधर्म हिन्दू धर्म के कुसंस्कारों को ग्रहण कर रहा है। इस प्रकार अज्ञानता वश नाना प्रकार की बातें उठने लगीं, पर जिन्होंने अन्तर में गोता लगाकर परमात्मा के साथ योग-स्थापन किया था वे ही नवविधान के असल मर्म को आयत्त कर सके थे। इसी कारण आज नवविधान गंभीर नाद से जगत् में भ्रातृभाव का प्रचार कर रहा है।

नवविधान की घोषणा करने के कई महीनों के बाद केशव नैनिताल पहाड़ पर गये। यहाँ आपने अकेले निर्जन में योग-ध्यान का साधन किया। इस साधन में आपकी धर्मपत्नी भी कभी-कभी योग देती थीं। इस साधन की सहायता से आपने गृहस्थ और योग-धर्म को एकत्र किया था। इस प्रकार के योग, वैराग्य और पवित्र गृहस्थ धर्म ने आपके जीवन को अति उच्च स्थान में उपस्थित किया था। आप केवल 'परोपदेशे पाण्डित्यम्' का प्रचार नहीं करते थे। आपने अपने जीवन द्वारा विशद भाव से दिखला दिया है कि एक धर्मपरायण गृहस्थ किस प्रकार भगवान् के साथ युक्त होकर अपने जीवन में स्वर्ग-राज्य प्रतिष्ठित कर सकता है और किस प्रकार स्वर्ग-राज्य की विशुद्ध धारा से अपने जीवन को सर्वदा निर्मल और पवित्रमय बना सकता है। आप जब-जब हिमालय के किसी स्थान में जाते थे तब-तब आपके जीवन में भगवत् भाव एक विशेष-विशेष रूप से प्रकाशित होता था। सर्वदा एक-एक विशेष-विशेष भाव का जागरण होता रहता था। जब आप नैनिताल से लौट आये, आपने अपने इन भावों को एक छोटी पुस्तक में प्रकाशित किया। इसी समय "स्वामी-आत्मा और स्त्री आत्मा" पर आपने एक प्रबन्ध भी लिखा था।

इसी समय आप ध्यान-साधन में नियुक्त हुए। सन्ध्या समय से दस बजे रात तक एक आसन पर बैठकर एक तन्त्री योग से भगवान् के नाम, गुण और लीला का कीर्तन करते-करते क्रमश. इस प्रकार ध्यान में मग्न होते थे कि इस ध्यान में तीन-चार घंटे बीत जाते थे। केवल अकेले आप ही इस

प्रकार साधन नहीं करते थे, आपके सहसाधकगण युवक ब्राह्म और ब्राह्मिकागण भी इस साधन में आपका साथ देते थे और इनसे योग-साधन का मर्म समझते थे। जिस प्रकार सन्तान का सम्बन्ध माता के साथ अति प्रेम और स्नेह से भरा रहता है आचार्य केशव ने परमात्मा और मानवात्मा में ऐसा ही सम्बन्ध इस ध्यान-योग से प्राप्त किया था और आप भगवान् को स्नेहमयी माता जननी कहकर आह्वान और मनन करने लगे।

आजकल परमहंस रामकृष्ण के शिष्यगण प्रायः कहा करते हैं कि केशव ने रामकृष्ण से ही नवविधान और भगवान् को माता कहकर सम्बोधित करने की शिक्षा पाई थी, पर यह बिल्कुल भूल और भ्रम है। केशव की जीवनी से यह भली भाँति झलकता है कि रामकृष्ण से मिलन के पहले ही केशव के अन्तर में नवविधान और भगवान् को मातृभाव से पूजा करने के भाव का आविर्भाव हुआ था। फिर इसे भी स्वीकार करना होगा कि केशव के साथ मिलन के बाद ही रामकृष्ण का नाम सुन पड़ने लगा था। रामकृष्ण दक्षिणेश्वर में अज्ञात अवस्था में थे। केशव के साथ मिलन के बाद लोगों ने इनका परिचय पाया था। यथार्थ में रामकृष्ण की महिमा का पहले-पहले प्रचार केशव ही के द्वारा हुआ था। अतएव यह कहना बिल्कुल मिथ्या है कि केशव ने नवविधान और मातृरूप से भगवान् की पूजा करने का भाव रामकृष्ण से पाया था।

रामकृष्ण परमहंस और केशवचन्द्र सेन दोनों का जिस समय मिलन हुआ था, दोनों ने एक दूसरे को उसी समय पहचान लिया था और दोनों के साधु हृदय मिलकर एक हो गये थे।

जिस प्रकार जोहरी जौहर का मर्म समझता है और पहचानता है उसी प्रकार साधु साधु को सहज ही पहचानते हैं। एक समय परमहंस ब्राह्मसमाज में गये थे उस समय सभी ब्रह्मोपासना में लीन थे। केशव के साथ आपकी जानकारी नहीं हुई थी। आपने उस समय सभी की ओर दृष्टि डालकर बिना किसी के कहे हुए पहचान लिया था कि केशव कौन हैं। फिर केशव ही ने परमहंस की महत्ता बङ्गाल के लोगों के निकट प्रकट की थी और उनकी महिमा, साधुता तथा भक्ति की घोषणा सबके निकट हुई थी। केशव में यह एक भारी विशेषता थी कि आप जहाँ-कहीं रत्न का अनुसन्धान पाते थे, वहाँ से उसे निकालकर देश के उद्धार के लिये देश के सम्मुख उसी दम रखते थे। जिस तरह भारत के उद्धार के लिये आपने बुद्ध, सक्रेटिस मूसा, योशष, महम्मद, चैतन्य इत्यादि महात्माओं को भारत के सम्मुख रक्खा है उसी प्रकार आप ही ने महात्मा परमहंस को भी जगत् के सम्मुख रक्खा है।

दोनों ही—केशवचन्द्र सेन और परमहंस रामकृष्ण—के मिलन से ही ब्राह्मसमाज में भक्ति का जागरण हुआ था। परमहंस के साथ योग के कारण आपके सरल मधुर शिशु स्वभाव से ब्राह्मसमाज को अति उपकार हुआ है। दोनों में सच्ची भक्ति लबालब भरी थी। रामकृष्ण की प्रेम-भक्ति काली कृष्ण इत्यादि की ओर थी और केशव की भक्ति चिरकाल एक भाव से अद्वितीय परम ब्रह्म की ओर थी और इसी भक्ति के बल से आप सर्वदा भगवान् को मातृ-भाव से पूजा उपासना करते थे। इस प्रकार दोनों एक भक्ति-भाव से आलोकित हो परस्पर को आक-

र्षित करने लगे। हिन्दू समाज की सीमा के बाहर जो परमहंस की उदारता का परिचय मिलता है और जिस उदारता के कारण परमहंस जगत्-विख्यात हैं वह उदारता केशव के संसर्ग के कारण ही है। वे एक दूसरे का मर्म खूब भली भाँति जानते थे।

१८०२ शक में केशव ने नये-नये कई धर्म-अनुष्ठान स्थापित किये। इन सब अनुष्ठानों के भीतर प्रेम और भक्ति झलकती थी। ब्राह्मसमाज का कठोर ज्ञान इस प्रकार प्रम और भक्ति से मधुर और कोमल हुआ। इसी समय आपने नव विधान को पताका निकाली। इस साल के उत्सव के समय नव विधान समन्वय और जय-घोषण के लिये आपने वेद, बाइबिल, ललितविस्तर और कुरान को एक जगह पर रखकर उसके ऊपर एक विजय का फरहरा फहराया और ईश्वर की महिमा गान कर अपने विश्वासी भक्त दलों के साथ इन सबका समादर किया। इस कारण आपके विरोधीदल ने इस समय भी आपका मर्म न समझकर आपकी निन्दा और अपवाद किया था, पर आपने इस समय नवविधान धर्म की जय घोषणा और ईश्वर की महिमा गाई थी। यह फरहरा नवविधान का एक निदर्शन है और सब धर्मों का मिलन। इस पताका की रचना से सभी के प्रति भ्रातृ-भाव और प्रेम झलकता है। इस पताका की आकृति और गठन में भी एक अलौकिक सुन्दरता है। क्रौस, त्रिशूल, चन्द्र, कमल एकत्र हो पृथ्वी के सब मानव-समाज में एकता और मिलन का भाव अति चमत्कार रूप से प्रकाशित होता है।

फिर इसी वर्ष के १६ माघ को एक प्रचारक सभ

का संगठन हुआ और इसका नाम "प्रेरित दरबार" पड़ा। इस सभा के प्रत्येक सभ्य ईश्वर के आदेशानुसार अपना जीवन-यापन करेंगे, यही सभा का एक महान् उद्देश्य था। प्रचारक-सभा पहले भी स्थापित हुई थी, पर इस "प्रेरित दरबार" की यह विशेषता थी कि सभा के सभी सभ्य एक भाव से मिलित होकर कार्य सम्पादित करेंगे। इसी भाव पर अति जोर दिया गया और इसी कारण सभी एक ईश्वर के अधीन हो कार्य करने लगे। इससे मतभेद की सम्भावना जाती रही। जहाँ स्वयम् भगवान् हैं वहाँ मिलन के सिवा किस प्रकार भेद हो सकता है। यहाँ भी केशव का एक अलौकिक गुण झलकता है। किस प्रकार सबको ईश्वराधीन कर आपने जगत् में एकता और मिलन की प्रचार-विधि का अवलम्बन किया था। आपने इस स्थल में इस प्रकार कहा था—"सब प्रकार से चेष्टा कर एकता की रक्षा करनी होगी। बहुतों का मत अथवा सभापति का मत, इन सबकी प्रधानता की जरूरत नहीं है। एक शरीर के अङ्ग के ऐसा प्रत्येक मनुष्य को मानना होगा। इसमें एक अङ्ग दूसरे अङ्ग का विरोधी कभी नहीं रह सकता है। बहुतों का मत लेकर काम करने से यह दोष रह जायगा। अतएव जबतक सब कोई एक मत न हों तबतक प्रयास यत्न द्वारा एक करना होगा। इस प्रकार एकता से जो निर्द्धारण होता है, इसमें कोई बात न कहकर सब कोई इसका अनुसरण करेंगे।" आपकी इस उक्ति में एक बड़ी दूरदर्शिता और जगत् में भ्रातृ-भाव की नींव पाई जाती है। सबोंको एक करना और उनमें भ्रातृ-भाव का जागरण करना आपके जीवन का

महान् व्रत था और इसी व्रत के पालन में आपने अपना जीवन बिताया था।

दरबार की आप बड़ी प्रतिष्ठा करते थे। आप इसका संचालक स्वयम् भगवान् को मानते थे और भगवान् का जो आदेश पाते थे उसी तरह अनुयायी कार्य करते थे। अतएव मत-भेद अथवा विरोध का इसमें लेशमात्र भी न था। इस दरबार के सभी सभ्य आपके स्नेह और सम्मान के पात्र थे। सभी के अन्तर में आप भगवत्-भाव का परिचय पाते थे। इसी कारण आपने एक दिन दरबार के प्रचारकों के पैर परस्पर धोने की अनुमति दी थी।

श्रीदरबार के प्रतिष्ठित प्रचारकगणों ने भारत के भिन्न-भिन्न स्थानों में ब्रह्म-नाम प्रचार का व्रत धारण किया। प्रताप चन्द्र ने बम्बई, अमृतलाल बसु ने मद्रास, अघोरनाथ गुप्त ने पञ्जाब, दीननाथ मजुमदार ने बिहार, गौर गोविन्द राय ने उड़ीसा और उत्तर बङ्गाल, प्यारी मोहन चौधरी और गिरीश-चन्द्र सेन ने पूर्व बङ्गाल और त्रैलोक्य नाथ सन्याल तथा उमा-नाथ गुप्त ने कलकत्ते और उसके निकटवर्ती स्थानों में ब्रह्म-नाम प्रचार का भार ग्रहण किया। इन भक्तों ने अति श्रद्धा और भक्ति के साथ आजन्म भारत के नगर-नगर में भगवान् का नाम प्रचार कर ब्राह्मसमाज की ख्याति बढ़ाई थी।

आचार्य केशव सर्वव्यापी सर्वभूतमय विश्वरूप भगवान् के भीतर सारे जगत् को देखते थे और फिर सब चेतन तथा अचेतन पदार्थों के भीतर भगवान् को देखते थे। विश्व के भीतर स्वर्गराज्य था और स्वर्गराज्य के भीतर सारा विश्व। आपने

अपने महायोग के बल से विश्व और स्वर्ग को एक किया था और इसी एकता की उपलब्धि के लिये पृथ्वी के समस्त धर्मों के भीतर एक परमात्मा के आविर्भाव-दर्शन के साधन के लिये आपने सब धर्मों के प्रति अति श्रद्धा की अञ्जलि दी थी। जैसे आप जर्दन नदी के तीर पर क्राइस्ट के सर पर पवित्रात्मा की ज्योति का अनुभव करते थे, उसी प्रकार प्राचीन आर्य ऋषि-मुनियों के तपस्या-योग के भीतर सत्यम् का प्रकाश देखते थे। महम्मद के लाइलाही इल्लिल्ला के भीतर अद्वितीयम् परमात्मन्, बुद्धदेव के निर्वाण के भीतर भगवान् और चैतन्य देव की प्रेमा भक्ति के भीतर भी मधुमय ईश्वर के प्रकाश का अनुभव करते थे। अतएव आप किसी को त्याग नहीं कर सकते थे। आपके निकट सारी पृथ्वी हरिमय थी।

अब केशव सम्पूर्ण रूप से योगी की नाईं जीवन यापन करने लगे। आपने केश मुण्डन कर गैरिक वस्त्र धारण करने और भिक्षा कर अपना जीवन धारण करने का व्रत धारण किया। संसार का भार अपनी सन्तान के हाथ सौंपकर आप संसार से मुक्त हुए। जब रोग से आक्रान्त हुए, आप अपने बन्धु-गण के निकट अपने खर्च के लायक सामग्री के लिये अर्थ-भिक्षा कर लेते थे। इस प्रकार एक यथार्थ योगी की नाईं आप नवविधान प्रचार में लीन हुए। आपने प्रेरित प्रचारक गण को नवविधान के प्रचार करने के लिये विधि-पूर्वक भगवान् के निकट उनको अभिषिक्त कर दूर देश में प्रचार करने के लिये भेजा। आपने अपने हवड़ा स्टेशन तक उनलोगों को विदाई दी थी। इस समय की एक अपूर्व और अलौकिक शोभा थी।

प्रत्येक प्रचारक विश्वास, उद्यम, उत्साह और आनन्द के साथ नवविधान का फरहरा फहराते हुए नवविधान प्रचार के लिये विभिन्न देशों की ओर अग्रसर हुए। इन प्रचारकों में प्रत्येक मानों सभी विषयों में नवविधान के मूर्तिमान् रूप थे। प्रत्येक से नवविधान सम्पूर्ण रूप से प्रकाशित होता था। इनके चरित्र में, प्रचार-प्रणाली में, दैनिक जीवन में, परिवार में, प्रार्थना-सङ्गीत सभी विषयों में नवविधान पूर्ण मात्रा से मूर्तिमान् था। इसी समय "विधान-भारत" ग्रन्थ रचित हुआ। इस ग्रन्थ से सबके मन में नूतन उत्साह की उत्तेजना भभक उठी और ब्राह्मसमाज ने नवविधान में एक नवीन स्वतन्त्र आकार धारण किया था। प्रचारक सभा का नाम दरबार था और प्रचारक का नाम प्रेरित। प्रचारक को लोग बाबू के बदले श्रद्धेय भाई कहकर आहूत करते थे। १८८१ ई० की २४वीं मार्च को जब प्रचारक वृन्द प्रचार के लिये कलकत्ते से बाहर गये थे उसी दिन नवविधान अङ्गरेजी पत्रिका का आरम्भ हुआ था। इसपर नवविधान पताका की सुन्दर मूर्त्ति थी। केशव अकेला इसे सम्पादित करते थे और प्रतिसप्ताह इसे नियमित रूप से प्रकाशित करते थे। इसके प्रथम अङ्क में नवविधान का मूलमन्त्र—"एक ईश्वर, एक शास्त्र, एक समाज। आत्मा की अनन्त उन्नति। साधु महाजनों के साथ आध्यात्मिक योग। ईश्वर का पितृत्व और मातृत्व और नारी का भगिनीत्व ज्ञान, पवित्रता, प्रेम, सेवा, योग और वैराग्य के उच्चतम विकास का सामञ्जस्य। राज-भक्ति" का विवरण—था।

जिस प्रकार केशव ने प्रचारकों की एक मण्डली स्थापित की थी और उनको प्रेरित उपाधि दी थी उसी प्रकार आपने

कई साधक ब्राह्म जनों को गृहस्थ वैरागी के व्रत में भुक्त किया था। वे साधक वैरागी ब्राह्म आपके आदेश के अनुसार जीवन-यापन करते थे। यहाँ तक कि उन साधकों के लिये एक विधान बैंक स्थापित हुआ था और उनके घर का खर्च आचार्य के मत के अनुसार ठीक किया जाता था इस प्रकार की व्यवस्था से साधकों का बहुत उपकार हुआ था।

१८८१ ई० में साधु अघोरनाथ गुप्त नव विधान-घोषणा करते हुए उत्तर में डेरागाजी खाँ पहुँचे! इस प्रकार बहुत मिहनत करने के कारण साधु बहुमूत्र रोग से आक्रान्त हो परलोक सिधारे। साधु की मृत्यु से केशव अति अधीर हुए और इस शोक से आपका शरीर भी बहुत दुर्वल और क्षीण हो गया। यहाँ तक एक दिन उत्सव के समय कीर्तन करते-करते आप मूर्च्छित हो गये। इसके बाद ही आपकी चिकित्सा आरम्भ हुई और जाँच करने से पता लगा कि आपको भी बहुमूत्र की व्याधि हो गई थी। इस प्रकार पीड़ित होने पर भी आपने अपना काम नहीं छोड़ा था। नित्य नूतन उत्साह और स्फूर्ति के साथ नव विधान-प्रचार में आप लगे रहे।

केशव की प्रखर दृष्टि चारों ओर थी। आपके लिये धर्म काल्पनिक नहीं था। आप ज्वलन्त जीवन धर्म के पथदर्शक थे। प्रत्येक मानव के जीवन से धर्म साक्षात् रूप से प्रकाशित होगा। यही आपके जीवन का प्रधान उद्देश्य था। जिस प्रकार योग-भक्ति हरिनाम गान में आपका उत्साह था उसी प्रकार गृहस्थी के सब कामों एवं समाज के सब कामों में भी आपका वैसा ही जीवन एवं उत्साह था। बहुत-से योगी-गृहस्थी के काम

से उदासीन हो जाते हैं, पर केशव में दूसरी ही बात थी। आप गृहस्थी के कामों में सर्वदा भगवान् का आविर्भाव देखते और अनुभव करते थे। आपने परिवार को जगत् के सम्मुख एक आदर्श परिवार बना रक्खा था। आपने पुत्र-कन्याओं को पूरी शिक्षा दी थी। १८८१ ई० में आपके बड़े लड़के और दूसरी लड़की का विवाह नवविधान विधि के अनुसार सम्पन्न हुआ था।

केशव ने मानव-जीवन को ब्रह्म मय बनाया था। मनुष्य के जीवन के भीतर से ब्रह्म का प्रकाश होगा, अतएव मनुष्य अपने आनन्द-आमोद, सुख-सम्भोग के भीतर भी भगवान् की झलक पावे, इसी उद्देश्य से आपने यात्रा, गान, सङ्कीर्तन, नाच इत्यादि को भी ब्रह्ममय कर डाला। इन सबके भीतर से आपने योगभक्ति सिखाई है। नित्य आप इस विषय पर सोच-विचार करते थे और नाना प्रकार के सङ्गीत, यात्रा, कीर्तन और कथा, नाना प्रकार के सुखद व्यवस्थाओं का आपने आविष्कार किया था। आप और आपके प्रेरित साधक गण इन सबमें स्वयं योग देते थे। इसी समय भगवान् की लीला के नाना प्रकार के अभिनय और नाटक लिखे गये थे। इसे देखकर सबको बहुत सुख और आनन्द हुआ। यहाँ तक कि विरोधी लोग भी इस प्रकार आपका कार्य देख सन्तुष्ट हुए थे।

इसी समय कई अति सुन्दर और उपकारी नाटकों की रचना हुई थी। इनमें नव वृन्दावन नाटक मानव-समाज के लिये अति उपकारी नाटक है। निखिल देश की धर्म-नीति का सुधार हो, आमोद के भीतर से देश के लोग शिक्षा पावें, इसी उद्देश्य से नववृन्दावन नाटक की रचना हुई थी। केशव की नाट्य-

शाला केवल खेल-तमाशे का ही स्थान नहीं थी, वरन् जिस प्रकार ब्रह्म-मन्दिर लोगों के अन्तर में पवित्र भाव का जागरण करता था, केशव की नाट्यशाला भी लोगों को अपने यथार्थ पवित्र जीवन-पथ में अग्रसर करने का एक विशेष उपाय हुई थी। यह नाट्यशाला केशव के कमल-कुटीर में थी। एक ओर तो आप आमोद के भीतर से लोगों को धर्म-पथ पर अग्रसर होने की राह बता रहे थे, दूसरी ओर प्रतिसप्ताह ब्रह्म-मन्दिर में उपासना में अपने जीवन के परीक्षित धर्म-तत्त्व उपदेश स्वरूप लोगो के निकट वर्णित करते थे। केशव के ये पन्द्रह उपदेश यथार्थ में एक अति अपूर्व और शिक्षाप्रद हैं। ये 'जीवन वेद' के नाम से प्रकाशित होकर यथार्थ मानव जीवन-साधन में बहुत सहायक होते हैं।

केशव अपने प्रेरित बन्धुवर्ग को नवविधान प्रचार के लिये दूर देशों में भेजकर आप स्वयं कलकत्ते में रास्ते-रास्ते घर-घर एक दीन की नाईं ब्रह्म-नाम-प्रचार करने में लगे। अपने दो-चार साथियों को साथ लेकर अचानक परिचित-अपरिचित धनी-दरिद्र सभी के घर पर उपस्थित हो हरिनाम कीर्त्तन कर आते थे। १८०३ शा० के वैसाख महीने की पहली तारीख से आपने अपने साथियों के साथ रास्ते-रास्ते भगवान् की महिमा का कीर्त्तन करना आरम्भ किया। इस प्रकार बहुत उत्साह और प्रेम के साथ भगवान् का नाम-गान कर आपने सारे कलकत्ते को भगवान् के चरणों में लीन किया था। यहाँ तक कि आपका सङ्कीर्तन सुन प्रायः नशाखोर लोग भी आपके साथ योग देते थे और भगवत कृपा-बल से आपके स्पर्श से दूषित जीवन से

परित्राण पाते थे। इस प्रकार दीन भिखारी नगे पैर केशव कभी तो धनी और कभी तो दरिद्र, कभी हिन्दू, कभी क्रिश्चियन सभी के निकट शहर के बड़े रास्तों पर--गली-कूचे, टोले-महल्ले, कलकत्ते के आसपास के ग्रामों में--अविश्रान्त भाव से भगवान् के नाम का प्रचार करने लगे। जहाँ आप पहले आध मील पैदल नहीं चल सकते थे वहाँ ब्रह्म-नाम के प्रचार में आप तीन-चार घटे खड़े रहकर सङ्गीत के साथ वक्तृता देते थे और तीन-चार मील नगे पाँव चले जाते थे। केशव की नजर में कोई भी पराया न था, सभी को आप एक दृष्टि से देखते थे और सबके प्रति आपका समान प्रेम और श्रद्धा थी। क्या हिन्दू, क्या वैष्णव, क्या क्रिश्चियन, क्या बौद्ध, क्या मुसलमान सभी एक भ्रातृभाव के धागे में आपके निकट गुँथे हुए थे। इस प्रकार सब धर्मों को एकीभूत करने में आप सर्वदा लीन थे। और इसका नमूना आपने अपने जीवन में दिखाया था। इस महान् कार्य में सभी साधकों की पूरी सहानुभूति आपने पाई थी। देश-विदेश चारों ओर से आपके इस महत् कार्य में उत्साह और सहानुभूति दिखानेवाले पत्रादि आपके निकट पहुँचते रहते थे।

नवविधान ने ब्राह्म-समाज में उस प्रकार की एक अलौकिक छवि प्रकाशित की। नवविधान समाज की उपासना प्रणाली, साधन, भजन, रहन-सहन, सभीके भीतर एक विचित्र धर्म-भाव का जागरण हुआ। इस कारण आदि और साधारण ब्राह्म समाज से नवविधान समाज का प्रभेद अति स्पष्ट रूप से मालूम होने लगा। इस प्रभेद के कारण लोग नवविधान के विरुद्ध नाना प्रकार की आलोचनाएँ और आक्षेप

करने लगे, पर जिन बातों के कारण नवविधान समाज पर आक्षेप और प्रतिवाद करते थे, धीरे-धीरे उन सब कार्यों का ग्रहण करने लगे। बहुत-सी रीतियाँ बहुत-से अनुष्ठान, यहाँ तक कि उपासना विधि, रहन-सहन आहारादि जिस कारण नवविधान को कुसंस्कार से युक्त समझते थे, वे सब आदि और साधारण ब्राह्म-समाज में स्थान पाने लगे। आजकल की तो बात ही नहीं कही जा सकती है। वर्तमान काल में तो नवविधान के सारे आध्यात्मिक भाव दोनों समाजों में सञ्चरित हो गये हैं।

आचार्य सदा सत्य और धर्म पर स्थिर हो अपना कार्य करते गये थे। इसी कारण आपने कभी भी असार, असत्य वा बाहरी आडम्बर का पक्ष नहीं लिया था। जहाँ पर आप असत्य और अधर्मभाव का परिचय पाते थे आप उसी दम उसका मूल नाश करते थे और उसके विरुद्ध अपनी शक्ति की चालना करते थे। किस प्रकार योग-भक्ति ज्ञान वैराग्य मानव-जीवन में प्रवेश करेंगे, किस प्रकार मानव-जीवन हरिप्रेमी आर्य ऋषिगण, क्राइस्ट, बुद्ध, चैतन्य, महम्मद इत्यादि भक्तों को अपनावें इसी साधन की पूर्त्ति में आप निरन्तर लगे रहे। नवविधान के विमल आकार में आप जगत को महारत्न दे गये हैं। इसी भाव से आपने ब्राह्म समाज को सङ्गठित किया है। आपको सम्पूर्ण रूप से यह प्रतीत हो गया था कि जबतक ब्राह्मधर्म में इस प्रकार के नवभाव का जागरण नहीं होगा, जबतक ब्राह्म समाज ब्रह्मनाम जगत् में नहीं प्रचार कर सकेगा, जबतक सारा मानव-मण्डली एक प्राण, एकमन, एकहृदय नहीं होगा तबतक पृथ्वी पर स्वर्गराज्य नहीं प्रतिष्ठित होगा। सारा मानवसमाज एक मन एकप्राण से एक

भगवान् की साधना करे यही आपकी अभिलाषा और वासना थी। यही आपका एक महान् स्वर्गीय भाव था और इसी भाव की पूर्ति करने में आपने अत्यन्त परिश्रम और त्याग स्वीकार किया था। यहाँ तक कि अन्त में इस प्रकार के परिश्रम से आप का शरीर क्षीण और दुर्बल हो गया।

रोग और शेष जीवन

पहले कहा गया है कि अति कठिन परिश्रम के कारण आचार्य केशव का शरीर अत्यन्त क्षीण और दुर्बल हो गया था। इसपर भी आप अपना कार्य उसी उद्योग और उद्यम के साथ करते गये। यहाँ तक कि आपको जो बहुमूत्र की बीमारी हो गई थी, इससे आप जानकार भी न थे। जब आप अति दुर्बलता के कारण १८८१ ई० में एक दिन उत्सव के समय कीर्त्तन करते-करते बेहोश हो गये थे तब आपके रोग की जाँच और चिकित्सा आरम्भ हुई थी। उत्सव शेष होते-होते आप की बीमारी बहुत बढ़ गई। यहाँ तक कि सब बहुत चिन्तित हो गये और आपके जीवन की कोई आशा न रही। आपकी चिकित्सा भली भाँति होने लगी और आप कुछ चंगे हुए। जैसे ही कुछ अच्छे हुए कि आपने फिर भी उसी उत्साह से अपना कार्य आरम्भ किया। इस कारण आप एकदम चंगे नहीं हो सके। इस तरह कभी बीमार और कभी कुछ स्वस्थ रहते थे। इस अवस्था में आप कुछ दिनों के लिये दार्जिलिङ्ग गये। वहाँ जाने पर आपकी बीमारी बढ़ गई और आप अति दुर्बल हो गये। वहाँ से आप कलकत्ते लौट आये। लौटने पर आपने नव वृन्दावन नाटक किया। इस नाटक में सभी काम आप ही को करना पड़ा था। नाटक तो अति सुन्दर रूप से हुआ, पर इस परिश्रम से आप और भी दुर्बल और क्षीण हो गये। आप जिस काम में

हाथ डालते थे उसे सुचारु रूप से बिना किये कभी भी सन्तुष्ट नहीं होते थे। काम किस प्रकार सुन्दर और सुव्यवस्थित रूप से सम्पन्न होगा यही भाव आपके सम्मुख उपस्थित रहता था। इसी कारण आप इस स्थल में अपनी सभी असुविधाओं को—यहाँ तक कि शारीरिक क्लेश और यन्त्रणाओं को भी—भूल जाते थे। यही कारण है कि आपने इस प्रकार की वीरता से समाज को सर्वदा जीवित और हरा-भरा रक्खा था। यदि ऐसा न होता तो नवविधान नाना प्रकार के वाधा-विघ्नों के भीतर भी सब प्रकार सुसज्जित और सुन्दर नहीं होता और स्वर्ग के नित्य नूतन फूल इसके भीतर से विकसित नहीं होते तथा सारी पृथ्वी को अपने सौरभ से सुगन्धित नहीं करते।

आचार्य केशव के अलौकिक विश्वास, योग और भक्ति का परिचय जितना आपके रोग की अवस्था में मिलता है उतना और किसी अवस्था में नहीं मिलता। १८८३ ई० की पहली जनवरी में आपने पृथ्वी के सभी धर्म-सम्प्रदायों को सम्बोधित कर एक पत्र प्रकाशित किया था। सब जातियों के लोगों को सम्मान के साथ भाई कहकर कई नवीन संवाद उपहार स्वरूप निवेदित किये थे। इसमें नवविधान के सुसमाचार का भी व्याख्यान किया हुआ है। यह पत्र भारतवर्ष, यूरोप, और अमेरिका के संवाद-पत्रों के सम्पादकों के पास भेजा गया था, और प्रकाशित हुआ था। बहुतों ने इसे बार-बार प्रकाशित किया था और इसका उत्तर भी दिया था। इसके बाद उस साल के उत्सव के उपलक्ष्य में आपने अपनी शेष वक्तृता "यूरप के निकट एशिया का संवाद" दी थी। इस बार केशव ने बड़ी धूमधाम के

साथ उत्सव किया था। इस समय आपने निम्नलिखित प्रार्थना की थी,—

"हे प्रेममय हरि, रोगाक्रान्त हो शरीर दुर्बल होने के कारण जैसे गत वर्ष प्रस्तुत हो रहा था, जान पड़ा कि उत्सव अब शेष नहीं कर सकूँगा। किन्तु शान्ति धाम, सुख धाम, तुमने मेरे सर पर हाथ देकर जब गोद में रक्खा, तब मैंने समझा कि तुम्हारी सेवा करना ही जीवन है। आलस्य मृत्यु है, मृत्यु दूसरा कुछ नहीं है। फिर परिश्रम करने लगा, बन्धुओ की सेवा करने लगा, फिर उत्सव-सम्पादन कर सका। प्रेम की वाणी, पुण्य की वाणी फिर जिसमें कह सकूँ, यदि मरा नहीं हूँ तो जिसमें मृत की नाईं नहीं रहूँ जिसमें भागवती तनु पाऊँ। इस पृथ्वी पर रहते-रहते जिसमें वीर की नाईं शक्ति-सामर्थ्य मेरे भीतर में आवे। मेरा दाहिना हाथ लोहे की नाईं कठिन हो। मेरी बात से अग्निस्फुलिङ्ग निकले।"

उत्सव के समय आपने एक दिन देवालय में एक ग्लोब रखकर उसपर नवविधान का पताका उड़ाकर प्रार्थना की और बन्धुओं को जो कहना था, कहा और स्फूर्ति तथा आनन्द के साथ आपने उत्सव सम्पन्न किया था। आपके उत्साह और आग्रह से किसी को यह पता नहीं लगा कि आप काल कराल रोग से पीड़ित थे। उत्सव के अन्त में प्रेरित मण्डली के लिये आपने विधि और जीवन-यापन के आदर्श-स्वरूप कई नियम लिख दिये थे। इसके बाद आप सपरिवार शिमला गये। इस प्रकार आपका शरीर दुर्बल हो गया था कि रास्ते में अम्बाला पहुँचने पर आपको ज्वर हो गया। इससे

आप और भी क्षीण और दुर्बल हो गये। चिकित्सा आरम्भ हुई और प्रायः दो महीने तक आप कुछ चंगा रहे, पर रोग से सम्पूर्ण रूप से मुक्त नहीं हुए थे। इसी समय आपने "नव संहिता" लिखना आरम्भ किया था। प्रतिदिन प्रातःकाल में पर्वत के मनोहर दृश्य में बैठकर आप "नव-संहिता" लिखते थे।

इसके बाद फिर आपका रोग बढ़ा और इस बार अब रोग घटा नहीं, बढ़ता ही गया। रोग दिन-दिन कठिन और जटिल होता गया। अरुचि, अर्श, कमर में दर्द, कठिन काश इत्यादि नाना प्रकार की व्याधियों से आपका शरीर सम्पूर्ण रूप से क्षीण हो गया। शरीर का तो ह्रास होता गया, पर असीम विश्वास, योग और भक्ति के बल से आप अपने शेष जीवन का कार्य सुचारु रूप से यथासाध्य बराबर करते ही गये। इसी अवस्था में आपने "नव-संहिता" और दूसरी पुस्तक "योग-रचना" समाप्त की थी। इस प्रकार पीड़ित होने पर भी आप उसी विश्वास और निष्ठा के साथ सम्पूर्ण रूप से प्रतिदिन पूजा उपासना, ध्यान और प्रार्थना करते रहे।

आपकी भूख दिन-दिन घटती गई। जबतक कुछ लोग आपकी पीठ और कमर नहीं दबाते, आपको भूख नहीं लगती थी। इस कारण शारीरिक परिश्रम के लिये डाक्टरों ने आपको बढ़ई का काम करने के लिये राय दी। आपने ऐसी अवस्था में चीरी लकड़ी से काम करना शुरू किया। आपने लकड़ी की छोटी-छोटी चीजें बनाई थीं। वे सब चीजें अभी भी आपकी कोठरी में उपस्थित हैं। आप जो काम करते थे सभी को बड़ी चाह और आग्रह के साथ करते थे। इन चीजों

के देखने से यह प्रत्यक्ष मालूम होता है, किस प्रकार आप-रोग की अवस्था में भी पूरी चातुरी, मनोयोग और अध्यवसाय के साथ सभी कामों को पूर्ण करते थे।

जैसे-जैसे रोग बढ़ता गया, वैसे-वैसे ब्रह्मानन्द केशव का ब्रह्मानन्द बढ़ता गया। इस अवस्था में आपको जिन्होंने देखा था वे आप के प्रगाढ़ योग और भक्ति की गवाही देते हैं। वे लोग इस विषय में कहते हैं कि केशव ने अपने कठिन दुःसह रोग में जिस प्रकार विश्वास का परिचय दिया था उस प्रकार स्वस्थ शरीर में भी नहीं दिया था। जिस समय आपके रोग की यन्त्रणा बढ़ती थी, आप शिशु की नाईं विश्वस्त चित्त के साथ स्नेहमयी परम जननी के साथ बात करते देखे और सुने जाते थे। इसके बाद आप आनन्द के साथ उठकर बैठते थे और कुछ खाते थे, मानों बीमारी से छुटकारा पाया मिला हो।

इस समय की निम्नलिखित प्रार्थना से प्रतीत होता है कि किस प्रकार आपने अपनी सभी अवस्थाओं में केवल परमेश्वर ही को एकमात्र सहारा और अवलम्बन बना छोड़ा था।—

"जीवन की अशान्ति सचमुच में है, हे ईश्वर! बड़ी अशान्ति है। तो भी रोग के भीतर समय-समय मिष्टता भोग की जाती है। दुर्बल अवसन्न तनु किस-किस प्रकार योग की शान्ति के भीतर मग्न होता है, यह मेरे निकट एक नूतन व्यापार है। लोग पीडा की अवस्था को दुःख की अवस्था ही समझते हैं, किन्तु जब रोग-शय्या की बगल में आहिस्ता-आहिस्ता आकर तुम अपनी सन्तान का दुर्बल मस्तक अपनी गोद में लेकर कानों में मीठी बात कहते हो, तब अहा! दुःख-सन्ताप किस प्रकार दूर हो जाता है और आत्मा

किस प्रकार गंभीर योग के भीतर प्रवेश करती है। वैसा समय स्वास्थ्य की अपेक्षा भी उत्कृष्ट है।"

१८८३ ई० के अक्तूबर महीने के पहले हफ्ते में केशव रोग से जीर्ण-शीर्ण हो कलकत्ते पहुँचे। रास्ते में कई दिनों तक दिल्ली और कानपूर में थे। कलकत्ते लौटने पर आपकी चिकित्सा के लिये डाक्टर इकट्ठे हुए और किस प्रकार चिकित्सा होगी इसकी मीमांसा होने लगी। शेष में अलोपैथिक चिकित्सा स्थिर हुई। चिकित्सा से कभी रोग घटता और कभी फिर बढ़ जाता था। इस प्रकार आप रुग्न अवस्था में जीवन यापन करने लगे, पर ऐसी अवस्था में भी आपने अपना स्वाभाविक काम कभी भी नहीं छोड़ा। इसी समय आपने अपने घर में एक नया देवालय स्थापित किया। इस देवालय के बनाने में भी आपने एक अपूर्व शक्ति दिखाई थी। दुर्बल रहते हुए भी आपने अपने प्रचारकों के साथ मिलकर देवालय की भित्ति की जोड़ाई की थी। जिसमें प्रचारकगण गृह-भित्ति की नाईं एक होकर रहें इसी उद्देश्य से आपने सभों से देवालय की जोड़ाई करवाई थी।

आपके रोग के समय में भी आपका धर्म-बन्धुओं के साथ कथोपकथन धर्मालाप अति विश्वास और निष्ठा के साथ जारी रहता था। एक दिन प्रधानाचार्य महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर केशव को देखने आये थे। उस समय केशव ने भूमिष्ठ होकर महर्षि को प्रणाम किया था और महर्षि ने अति आदर और प्रेम के साथ आपका आलिङ्गन किया था। यह पिता-पुत्र के मिलन का सुन्दर दृश्य था। दोनों में आन्तरिक विश्वास और धार्मिक अभिज्ञता के ऊपर वार्तालाप हुआ था।

इसी रोग अवस्था में परमहंस रामकृष्ण एक दिन केशव को देखने आये थे। जिस समय परमहंस आये थे उस समय केशव सोये हुए थे। परमहंस को बहुत देर तक ठहरना पड़ा था। जिस समय भेंट होगी उस समय परमहंस समाधि में मग्न हुए और इसी अवस्था में जोर से चिल्लाकर कहा—"अजी बाबू, मैं बहुत दूर से तुमको देखने आया हूँ। जरा मुलाकात करो, मैं और नहीं ठहर सकता हूँ।" इसी समय केशव आपके निकट पहुँचे और आपको प्रणाम किया। प्रायः आध घण्टे तक दोनों में बहुत प्रकार का वार्तालाप हुआ। परमहंस ने कहा, "उत्तम फूल होगा इसलिये माली जिस प्रकार गुलाब की जड़ कोड़ देता है, तुमको भी परम माता वही कर रही हैं, यह तुम्हारी पीड़ा नहीं है। तुम परम माता के चुने हुए गुलाब के पेड़ हो। परम माता को पूरी तौर से पाने में शरीर में एक-आध बार विपद् होती है; वह एक-आध बार शरीर को हिला देती है। उस बार तुम जो बहुत बीमार पड़े थे उस समय बड़ी भावना हुई थी। सिद्धेश्वरी को कच्चे नारियल और चीनी की मन्नत मानी थी। इस बार उतनी भावना नहीं हुई। केवल कल रात्रि में प्राण न जाने कैसा हो गया। परम माता को पूछा, 'माता, यदि केशव न रहे, तो मैं किसके साथ बात-चीत करूँगा'। दोनों के वार्तालाप में एक प्रकार का गभीर योगानन्द और अलौकिक समाधि विलक्षण रूप से झलकती थी।

जैसे-जैसे आपकी पीड़ा बढ़ती गई, आपका विश्वास और भक्ति भी बढ़ती गई। इसी अवस्था में आपको देखने के लिये जब लार्ड बिशप आये थे उस समय आपके दाँत की जड़ से

खून निकाला गया था। आप इसी अवस्था में लार्ड बिशप के साथ वार्तालाप करने लगे और तनिक भी इस अवस्था में आपके आगमन और वार्तालाप से विरक्त नहीं हुए थे।

कुछ समय के बाद आपका रोग बहुत बढ़ गया। चिकित्सक कुछ नहीं कर सके। तब अलोपैथिक चिकित्सा छोड़कर डाक्टर महेन्द्रलाल सरकार की होमियोपैथिक चिकित्सा शुरू हुई, परन्तु इस चिकित्सा से भी कुछ आराम नहीं हुआ। इसपर भी आपके देवालय का काम जारी रहा। १८८४ ई० की पहली जनवरी को देवालय की प्रतिष्ठा हुई। इस समय आप अति दुर्बल हो गये थे तोभी इस अनुष्ठान में आपको योग देने से कोई रोक नहीं सका। कई लोग आपको कुर्सी पर बैठाकर ऊपर से नीचे लाये। इस अवसर पर आपने वेदी से इस प्रकार प्रार्थना की थी—

"माता! तुम्हारे घर में आया हूँ। लोगों ने आने को मना किया था, किसी प्रकार शरीर ले आया हूँ। मातः, तुम इस घर पर अधिकार कर बैठी हो? यह देवालय तुम्हारा घर, लक्ष्मी का घर है। नमः सच्चिदानन्द हरे! आज १८८४ ई० की पहली जनवरी, मङ्गलवार, १८०५ शक के ५ पौष को यह देवालय तुम्हारे चरण में उत्सर्ग किया गया। इस घर में देश-देशान्तर से तुम्हारे भक्तगण आकर तुम्हारी पूजा करेंगे। इस देवालय के द्वारा इस घर और महल्ले का कल्याण होगा—इस शहर का कल्याण होगा—और सारे देश और पृथ्वी का कल्याण होगा। गत कई वर्ष मेरे घर में छोटे देवालय से स्थानाभाव के कारण भक्तगण लौट जाते थे। मेरी बड़ी आकांक्षा थी कि कुछ ईंटें

लेकर तुम्हारे लिये एक घर बना दूँ। उसी आकांक्षा को पूरा करने के लिये, मात. लक्ष्मी, तुमने दयाकर अपने हाथ से ईंटें जोड़कर अपना यह बड़ा देवालय बना लिया। बड़ी इच्छा है कि मैं इस घर के उस बरामदे में तुम्हारे भक्तगणों के साथ नाचूँ। यही घर मेरा वृन्दावन है, यही मेरा काशी और मक्का है, यह मेरा जेरूशेलेम है; इस स्थान को छोड़कर मैं अब कहाँ जाऊँगा? मेरी आशा पूर्ण करो। मात', आशीर्वाद दो, तुम्हारे भक्त सब इस घर में आकर तुम्हारा प्रेम-मुख देखकर अपनी अदर्शनजन्य यन्त्रणा दूर करें। मातः, मेरी भारी अभिलाषा है कि मैं तुम्हारा घर सज दूँ।"

"प्रिय भ्रातृगण! तुमलोगों को भी कहता हूँ, मेरी माँ जननी बड़ी शौकीन माता हैं। भाइयो, तुमलोग यह नहीं समझना, मेरी माँ पत्थर की नाईं शुष्क माँ हैं, उनको कुछ शौक नहीं है। तुमलोग सब कोई कुछ-कुछ देकर माँ जननी का घर सज दो। कुछ-कुछ देकर उनकी पूजा करो। झूठमूट अपनी कुछ बातों से माँ जननी की पूजा मत करो। माँ जननी तुम लोगों को बहुत प्यार करती हैं। तुमलोगों के भक्तिपूर्वक एक छोटा भी फूल माँ के हाथ में देने से वे सादर उसे अपने हाथ से स्वर्ग मे ले जाकर देव-देवी सबको बोलाकर उसे दिखलाती हैं और आनन्द प्रकट कर कहती हैं—'देखो पृथ्वी के अमुक भक्त ने मुझे यह सुन्दर चीज दी है।' भाइयो, मेरी माँ जननी बहुत अच्छी हैं जी, बहुत अच्छी, माँ जननी को तुमलोगों ने नहीं पहचाना है। तुमलोग माँ जननी के हाथ में जो देते हो, परलोक में जाकर तुमलोग देखोगे, उसे आदर और यत्न के साथ सहस्र

गुणा बढ़ाकर अपने भण्डार में उन्होंने रख लिया है। यही माँ जननी मेरा सर्वस्व हैं। माँ जननी मेरा प्राण, माँ जननी मेरा ज्ञान, माँ जननी मेरी भक्ति दया, माँ जननी मेरी पुण्य शान्ति, माँ जननी मेरी श्री सौन्दर्य हैं। माँ जननी मेरा यह लोक-परलोक हैं। माँ जननी मेरी सम्पद् स्वास्थ्य हैं। विषम रोगयन्त्रणा के भीतर माँ जननी मेरी आनन्द सुधा हैं। इन्हीं आनन्दमयी जननी को लेकर, भाइयो! तुमलोग सुखी हो। इन माँ जननी को छोड़कर दूसरा सुख मत खोजना। यही माँ जननी अपनी गोद में रखकर तुमलोगों को इस लोक में चिरकाल सुख से रक्खेंगी। जय मात' जननी आनन्दमयी जय! जय सच्चिदानन्द हरे!"

यही आपकी साधारण में शेष प्रार्थना थी। येही कई अमृतमयी बातों को कहकर आप चिरकाल के लिये इस जगत् में नीरव रहे। माँ आनन्दमयी की जय घोषणा करते और सबोंके लिये कल्याण प्रार्थना करते-करते मण्डली को आशीर्वाद दे आपने वहाँ से प्रस्थान किया। इस समय आप अति दुर्बल और क्षीण शरीर हो गये थे—रोग से कातर हो काँपते-काँपते आपने इस विधि में योग दिया था। इस प्रकार दुर्बल होने पर भी आपने अपनी दुर्बलता की जरा भी जानकारी न रक्खी थी। बल्कि स्फूर्ति के साथ इस महावाक्य को कहा था—"इससे यदि कष्ट हो, तब धर्म मिथ्या है। तुमलोगों ने मेरी यथार्थ चिकित्सा नहीं की।"

देवालय प्रतिष्ठा के बाद केशव का रोग क्रमश. बढ़ने लगा। आप दुस्सह यन्त्रणा से बहुत व्याकुल हो छटपटाने लगे।

किसी प्रकार की चिकित्सा से आपको तनिक भी आराम न मिला। आपके बन्धु-बान्धव, आत्मीय जन, बड़े-बड़े चिकित्सक सब अति यत्न के साथ आपके निकट रह आपकी सेवा में लीन रहते थे, पर किसी प्रकार आपको आराम नहीं मिला। आप अति अटल और धीर व्यक्ति थे, पर इस प्रकार की दुस्सह यन्त्रणा से सम्पूर्णरूप से कातर हो गये। इस प्रकार की असीम पीड़ा और यन्त्रण के भीतर भी आपका विश्वास और भक्ति अटल और अलौकिक थी। इस पीड़ा में भी कातर भाव से अश्रुपात करते हुए आप यही कहते थे—"माँ जननी, मेरा मुख जिसमें तुम्हारी निन्दा न करे। मैं क्यों तुम्हारी निन्दा करूँगा? मातः, तुमतो रोग द्वारा मुझे अपनी गोद में खींचे ले जा रही हो।" आपको यह पूरा विश्वास था और आप इसका भली भाँति अनुभव करते थे कि मनुष्य को भयङ्कर शारीरिक व्यथा से पीड़ित होने पर भी, प्रेममयी परम जननी की प्रकृति तनिक भी नहीं बदलती है। आपकी व्यथा जितनी ही बढ़ती जाती थी, उतना ही आपका विश्वास और योग बढ़ता जाता था। आप इसका भली भाँति अनुभव करते थे कि जिस प्रकार स्नेहमयी माँ जननी प्रचुर सुख, सौभाग्य, आनन्द, शान्ति देती हैं उसी प्रकार अति स्नेह का परिचय स्वरूप स्नेहमयी परम जननी मानव के योग को घनीभूत और प्रगाढ़ करने के लिये रोग दान करती हैं। इस प्रकार रोग-अवस्था में आचार्य केशव परमात्मा के अति निकट होते गये। शारीरिक व्यथा की वृद्धि के साथ-साथ आपका धर्म-बल योग और भक्ति अति घनीभूत होती गई। इसी कारण मृत्यु के समय मित्र, बन्धु, आत्मीय जन को आपने जो-जो बातें कही

थीं वे सब सार बातें स्वर्ग का परिचय देती हैं। मृत्यु के समय भगवान् को छोड़ और दूसरा कोई सहायक और अवलम्ब देनेवाला नहीं है, यह अति स्पष्ट रूप से महात्मा केशव के मृत्यु-काल से विदित होता है। बगीचे के वृक्ष लतादि को दिखलाकर आप कहा करते थे--"मै इस प्रकार परलोक की प्रतीक्षा करता हूँ।"

आपकी मृत्यु के समय आत्मीय लोगों का रोना देखकर किसी बन्धु ने आपसे कहा था--"आप यदि कुछ कहें तो स्त्रियों के मन में कुछ शान्ति हो।" इसपर आपने कहा--"मैं वैकुण्ठ की नई बात सोच रहा हूँ, मैं अभी वही कहूँगा; उसे कहने से वे और भी रोवेंगी। तुमलोग उनलोगों को कह दो कि ससार झूठ और माया है।"

आपको देखने के लिये बहुत-से लोग आया जाया करते थे। इससे परिवार के लोग विरक्त होते थे, क्योंकि वे समझते थे कि इससे रोगी को और भी अधिक कष्ट होगा, पर महात्मा केशव सबोंको अपने पास आने के लिये अनुमति देते थे कि जिसमें किसी को आपसे नहीं मिलने के कारण मन में दुःख न हो।

जैसे केशव का रोग बढ़ता गया, आपका योग और भी घनिष्ठ एवं गभीर होता गया। आपका शेष जीवन परलोक, अमर धाम, नित्य योग और अनन्त जीवन का प्रत्यक्ष प्रमाण देता है। आपकी मृत्यु अमृत और अमरलोक का सोपान हुई। आपका शेष जीवन परलोक और इस लोक को अति प्रत्यक्ष रूप से युक्त करता है। आपके शेष जीवन से पूरा परिचय मिलता है कि आप इस संसार मे रहकर ससार के नाना,

विधि कार्यों का सम्पादन करते हुए भी अन्तर में अन्त:—स्वामी के साथ युक्त रह सर्वदा स्वर्ग-धाम की यात्रा के लिये अपने को प्रस्तुत कर रहे थे। जिस प्रकार कमल का पत्ता जल में रहकर भी जल से निर्लिप्त रहता है, महान् केशव उसी प्रकार संसार में रहकर सब कार्यों को कर संसार से निर्लिप्त हो सर्वदा परमात्मा का अनुसन्धान करते रहे। अतएव परलोक गमन के काल में आपके जीवन से संसारासक्ति तनिक भी नहीं देख पड़ती थी। अत्यन्त शारीरिक पीड़ा के भीतर भी प्रशान्तात्मा केशव महायोग में निमग्न देख पड़ते थे।

६ जनवरी रविवार को आपका रोग अति भीषण हुआ, जीवन की आशा जाती रही। सोमवार की रात्रि से बोलने की शक्ति लुप्त हुई। बन्धु बान्धव आत्मीय जन सभी भीषण शोक से विह्वल हो गये। शोकातुर सङ्गीत प्रचारक गण ब्रह्मनाम का गान करने लगे। इस प्रकार भजन और ब्रह्मनाम ध्वनि के भीतर महात्मा केशव ने स्नेहमयी जननी की गोद में आश्रय और शान्ति पाई। इसी हरिनाम की ध्वनि ने इस महात्मा को असह्य यन्त्रणा के भीतर स्नेहमयी जननी का चिरप्रसन्न मुख दिखलाया और परम शान्ति दी, जिससे आपकी सभी यन्त्रणाएँ दूर हुईं और आप शेष मुहूर्त में प्रसन्न मुख से माँ जननी के साथ १८८४ ई० की ८ जनवरी को प्रातः ९ बजके ५३ मिनट पर ४५ वर्ष की अवस्था में एक हो गये।

आचार्य केशव इस लोक को छोड़ अमर धाम में चले गये! आपकी अक्षय कीर्ति, प्रगाढ़ विश्वास, भक्ति और योग ये सब चिर काल तक मानव समाज में आपको अमर बनाये रहेंगे।

महात्मा केशव के स्वर्गवास का संवाद चारों ओर विद्युत् की भाँति फैल गया। हजारों लोग रोते हुए मृत देह के प्रति सम्मान दिखाते हुए राह और श्मशान घाट में इकट्ठे हुए थे।

इस प्रकार सबों ने आप के प्रति श्रद्धा और सम्मान दिखाया था।

केशव इस लोक से अमर लोक चले गये, पर अपना उच्चतम आध्यात्मिक चरित्र छोड़ गये जो सर्वदा इस लोक में--मानव समाज में स्वर्ग-राज्य का परिचय देता रहेगा। कर्म-योग, ज्ञान-भक्ति, ध्यान-समाधि के अन्तर में प्रवेश करने से ही केशव का अलौकिक मर्म प्रकाशित होता है। जितना ही साधक उस मार्ग में अग्रसर होंगे, उतना ही वे केशव के मूल्यवान् चरित्र का अनुभव करेंगे। केशव की अलौकिक साधना की अनुभूति नीचे लिखी प्रार्थना से झलकती है जिसे आपने एक समय मृत्युशय्या पर लिखी थी—"हे पिता, अपनी सेवा पूजा के लिये तुमने जो सब शक्ति, सुयोग और आशीर्वाद दान किया था, उसके लिये तुम मेरी शेष कृतज्ञता ग्रहण करो। मेरी की हुई पाप-राशि तुम जानते हो, अभी पवित्रात्मा द्वारा मुझे पवित्र और मुक्त कर मुझे आश्रय दो। इस असहाय अवस्था में, हे प्रभो! मुझे तुम अपने प्रेम का अनुभव करने दो। मेरी चारों ओर अन्धकार से आच्छन्न है, हे दयामय पिता, इस संकट काल में अपना प्रेम मुख प्रकाशित करो और अपने सुमिष्ट सहवास में मुझे रक्खो। तुमको धन्यवाद देता हूँ कि तुमने इस विपद् समय में मुझे नहीं छोड़ा है और न कभी छोड़ोगे। तुम ही केवल मेरे चिरदिन के बन्धु हो। अपने परिवार, बन्धुओं और बान्धवों को

मै तुम्हारे हाथ में सौंपता हूँ, उनलोगों को आशीर्वाद दो और अपने आश्रय मे चिरकाल के लिये स्थान दो। अभी अनुमति करो कि मैं शान्त मन आनन्द हृदय के साथ चला जाऊँ। प्रिय पिता, तुम मुझको विश्वास, प्रेम और पवित्रता के राज्य में ले चलो।"

केशवचन्द्र सेन ऐसे महान्, उदार-चित्त, धर्म-परायण, धर्म-भीरु, धर्म-वत्सल, जीवन की सभी अवस्थाओं में मृत्यु काल तक केवल परमात्मा पर निर्भर करनेवाले और पवित्र स्वर्गराज्य के अभिलाषी थे। इसी कारण आप आजतक इतने महान् हैं और आगे भी महान् और अमर बने रहेंगे। जो महापुरुष परमात्मा के साथ युक्त हैं उनकी कभी मृत्यु नहीं होती--वे सर्वदा अजर और अमर बनकर मानव सन्तानों के लिये स्वर्ग-राज्य के पथदर्शक बन उनको प्रेम, पुण्य और पवित्रता से परमेश्वर के निकट ले जाते हैं। धन्य हैं वे महात्मा! हे परमात्मन्, तुम उन महापुरुषों के अभिप्राय को पूर्ण करो, सभी मानवों को अपने क्रोड़ में शान्तिमय आश्रय दो।